पी.एम. श्री कमला राम नौटियाल राजकीय आदर्श इंटर कॉलेज धौन्तरी, उत्तरकाशी (उत्तराखंड)

विद्यालय विज्ञान पत्रिका अंक मई 2026

विज्ञान मण्डल
SCIENCE CIRCLE

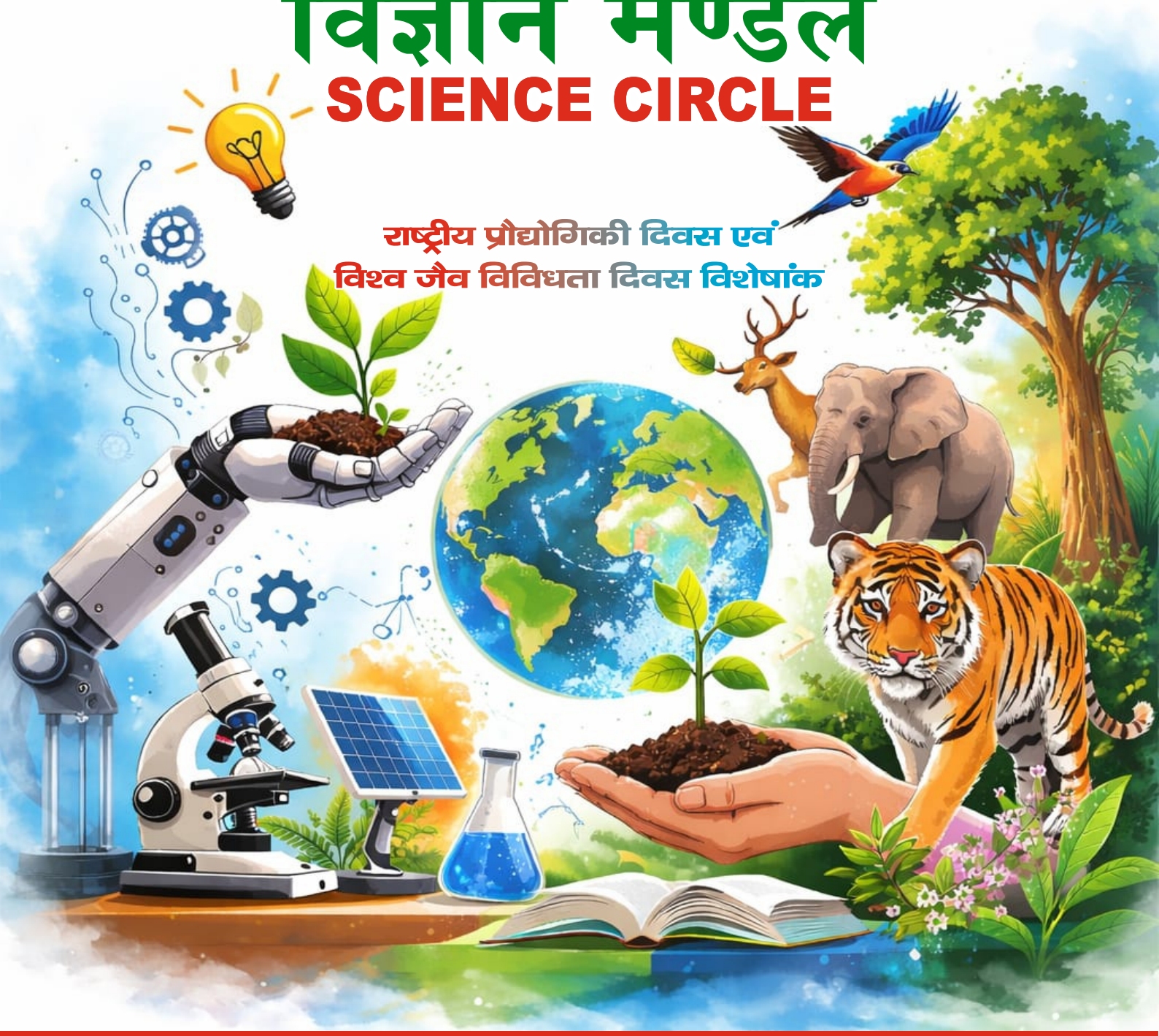

राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस एवं
विश्व जैव विविधता दिवस विशेषांक

P.M. SHRI K.R.N. G.M.I.C.
DHAUNTRI, UTTARKASHI

अपनी बातः संपादक परिचय

डॉ. शम्भू प्रसाद नौटियाल
(एम.एससी., बी.एड.,स्नात्तकोत्तर शिक्षा शास्त्र, पीएच.डी.–जंतु विज्ञान, व्यवसाय– शिक्षक)
'पीएम श्री के.आर.एन. जी.एम.आई.सी. धौंतरी', उत्तरकाशी

शिक्षक के रूप में कार्यरत रहते हुए मेरा सदैव प्रयास रहा है कि शिक्षा को पर्यावरण और प्रकृति के संरक्षण से जोड़ा जा सके। इसी उद्देश्य के साथ 'हिमालय प्लांट बैंक' और 'गंगा विश्व धरोहर मंच' (संस्थापक संयोजक) के माध्यम से अपनी भूमिका निभाने का एक विनम्र प्रयास कर रहा हूँ।

पौधा रोपण और जल साक्षरता के प्रति मेरी छोटी सी कोशिशों को समय–समय पर विभिन्न संस्थाओं का स्नेह और प्रोत्साहन मिला है। इनमें 'स्वच्छता के हीरो सम्मान' 2024 भरतीय वन्य जीव संस्थान (W.I.I.), द्वारा 'ग्लोबल टीचर अवार्ड' (2023), 'हिमश्री सम्मान' 2024 (UCOST) द्वारा), 'राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, भारत (NASI)' द्वारा 'बेस्ट साइंस टीचर अवार्ड 2022' और 'राज्यपाल प्रशस्ति पत्र' 2013 जैसे सम्मान भी प्राप्त हुऐ हैं। मेरे लिए ये पुरस्कार व्यक्तिगत उपलब्धि से कहीं अधिक, प्रकृति के प्रति मेरी जिम्मेदारी का स्मरण कराते हैं।

विज्ञान और पर्यावरण के क्षेत्र में अपने सीमित अनुभव, शोध तथा प्रकृति के प्रति अटूट निष्ठा को समेटकर मैंने यह पत्रिका आपके सम्मुख रखने का साहस किया है।

एक विनम्र अपीलः

प्रकृति और जल ही हमारे जीवन का आधार हैं। आइए, हम सब मिलकर जल संरक्षण और वृक्षारोपण को अपने जीवन का हिस्सा बनाएं ताकि आने वाली पीढ़ियों को एक सुरक्षित और हरा–भरा भविष्य सौंप सकें।

प्रधानाचार्य संदेश

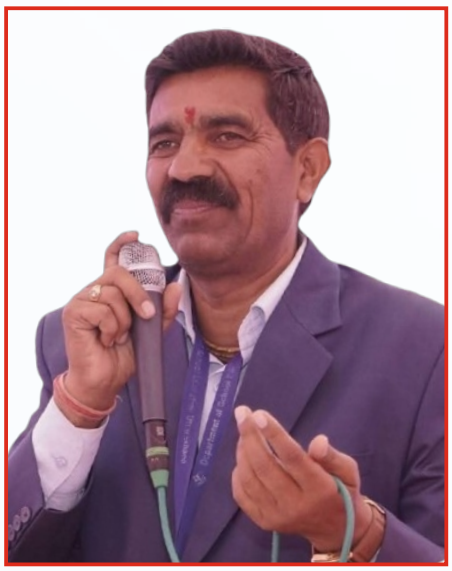

मुझे यह जानकर अत्यंत हर्ष हो रहा है कि हमारे विद्यालय की विज्ञान पत्रिका 'विज्ञान मंडल' का मई 2026 अंक 'राष्ट्रीय तकनीकी दिवस' और 'विश्व जैव विविधता दिवस' जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर केंद्रित है।

आज का युग केवल सूचनाओं का नहीं, बल्कि नवाचार और संवेदनशीलता के समन्वय का युग है। 'राष्ट्रीय तकनीकी दिवस' हमें याद दिलाता है कि विज्ञान ने हमें असीमित शक्तियाँ दी हैं, लेकिन उन शक्तियों का सही उपयोग तभी संभव है जब हम उनके साथ नैतिक मूल्यों और 'मानवीय संवेदनाओं' को जोड़ें। तकनीकी का उद्देश्य केवल मशीनीकरण नहीं, बल्कि समाज और प्रकृति के बीच संतुलन बनाना होना चाहिए।

उत्तराखंड के इस पावन आंचल में हमारी सबसे बड़ी संपत्ति यहाँ की 'स्प्रिंग बायोडायवर्सिटी' (झरनों की जैव विविधता) है। हमारे छात्र अपनी वैज्ञानिक सोच का उपयोग कर यदि इन प्राकृतिक जल स्रोतों और इनके आसपास की सूक्ष्म दुनिया को समझने का प्रयास करते हैं, तो यही उनकी सच्ची शिक्षा होगी। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हमारे शिक्षक और विद्यार्थी अपनी जिज्ञासा और रचनात्मकता से विज्ञान के क्षेत्र में नए आयाम स्थापित करेंगे।

मैं इस पत्रिका के संपादन मंडल और इसमें योगदान देने वाले सभी छात्र–छात्राओं को उनकी मेहनत के लिए बधाई देता हूँ। आइए, हम सब मिलकर विज्ञान और तकनीकी के माध्यम से प्रकृति का संरक्षण करने का संकल्प लें।

शुभकामनाओं सहित,

प्रधानाचार्य
शांति प्रसाद नौटियाल
पीएम श्री कमलाराम नोटियाल रा.आ.इ.कॉ.
धौंतरी, उत्तरकाशी

संपादकीय:
विज्ञान की शक्ति और प्रकृति का प्रेम

प्रिय पाठकों,

'विज्ञान मंडल' का यह मई अंक दो खास मौकों का संगम है– 11 मई 'राष्ट्रीय तकनीकी दिवस' और 22 मई 'विश्व जैव विविधता दिवस'। यह समय हमें यह सोचने का अवसर देता है कि हमारी वैज्ञानिक तरक्की और प्रकृति के प्रति हमारा लगाव किस दिशा में जा रहा है।

राष्ट्रीय तकनीकी दिवस हमारी उस ताकत का प्रतीक है, जिससे हमने परमाणु ऊर्जा से लेकर अंतरिक्ष की ऊंचाइयों तक अपनी पहचान बनाई है। तकनीकी ने हमें बहुत शक्ति दी है, लेकिन असली शक्ति वही है जो 'रक्षा' करना जानती हो। यहाँ हमें अपनी भावनाओं (संवेदनाओं) को याद करना होगा। क्या हमारी मशीनें और तकनीकी सिर्फ सुख–सुविधा के लिए हैं, या वे इस धरती को बचाने के लिए भी काम आ रही हैं?

हिमालय की गोद में रहने वाले हम लोगों के लिए 'स्प्रिंग बायोडायवर्सिटी' (Spring Biodiversity)– यानी हमारे झरनों और उनके आसपास पनपने वाला जीवन–केवल विज्ञान नहीं, बल्कि हमारी संस्कृति है। विश्व जैव विविधता दिवस पर हमें यह संकल्प लेना चाहिए कि हमारा तकनीकी ज्ञान इन प्राकृतिक झरनों और धरोहरों को बचाने का जरिया बने।

इस अंक के माध्यम से मेरा विद्यार्थियों और शिक्षकों को यही संदेश है कि एक सच्चा वैज्ञानिक वही है, जिसके पास दिमाग के साथ–साथ एक संवेदनशील दिल भी हो। जब विज्ञान और भावनाएं साथ चलती हैं, तभी हमारा भविष्य सुरक्षित रहता है।

आइए, तकनीकी को प्रकृति का दोस्त बनाएं, दुश्मन नहीं।

जब विज्ञान में संवेदना घुलती है, तभी सुनहरे भविष्य की राह खुलती है।

डॉ. शंभू प्रसाद नौटियाल
संपादक एवं समन्वयक
(विज्ञान मंडल)
पीएम श्री कमलाराम नौटियाल
रा.आ.इ.कॉ. धौंतरी (उत्तरकाशी)

अनुक्रमणिका

1.	राष्ट्रीय तकनीकी दिवसः शक्ति, युक्ति और हमारी जिम्मेदारी	1
2.	हमारी शक्ति, हमारी पृथ्वीः प्रकृति के विज्ञान को समझने का समय	2
3.	नीरीः भारत में पर्यावरण विज्ञान और अभियांत्रिकी का अग्रणी अनुसंधान संस्थान	3
4.	स्प्रिंग बायोडायवर्सिटीः हिमालयी जीवन का अदृश्य आधार	4
5.	प्रकृति मुस्कुराएगी, तो हम सुरक्षित रह पाएंगे	5
6.	फूलदेईः उत्तराखंड की जैव–विविधता और मानव जीवन का उत्सव	6
7.	उत्तराखंड के पहाड़ों में पाए जाने वाले पक्षियों की विविधता	7
8.	प्रोफेसर (डॉ.) जी. के. धींगराः विज्ञान की साधना और शोध के शिखर पुरुष	8
9.	'राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, उत्तराखंड, श्रीनगर (गढ़वाल)	9
10.	भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की	10
11.	उत्तराखंड के राज्य सरकार के प्रमुख तकनीकी संस्थान	11
12.	जब बिजली नहीं, रोशनी दौड़ेगी डेटा–क्वांटम भौतिकी का नया मोड़	12
13.	भविष्य की सड़कें: जब रास्ते खुद बोलेंगे–सावधान, मैं टूटने वाला हूँ!	14
14.	विज्ञान और न्याय का सशक्त सेतुः डॉ. राजेश सिंह	16
15.	आहार–2026: जहां हुआ विज्ञान की शुद्धता और स्वाद की टेक्नॉलॉजी का मिलन	17
16.	उत्तराखंड में विज्ञान का उभरता केंद्रः CRIS DNA Labs की कहानी	18
17.	प्लांटिका संस्थानः विज्ञान, कौशल और आत्मनिर्भर कृषि की नई दिशा	19
18.	डॉ. बृजमोहन शर्माः जब विज्ञान रसोई तक पहुँचता है।	20
19.	थाली में छुपा सचः मिलावट की पहचान का विज्ञान	21
20.	घर बैठे विज्ञानः खाद्य पदार्थों में मिलावट की पहचान का सरल विज्ञान	22
21.	फ्योंली और जैव–विविधताः बसंत का वैज्ञानिक संदेश	23
22.	मधुमक्खियाँः जैव–विविधता की अदृश्य इंजीनियर	24
23.	मधुमक्खी पालन (Apiculture): विज्ञान, प्रबंधन और आय का व्यवहारिक मॉडल	26
24.	हिमालय की गोद में बसी जैव–विविधता की अनमोल धरोहरः उत्तराखंड	27
25.	जैव–विविधता और संरक्षणः पृथ्वी के जीवन तंत्र का वैज्ञानिक आधार	28
26.	युद्ध की छाया में सिसकती जैवविविधताः भारत तक पहुंचता पर्यावरणीय संकट	30
27.	जैव विविधता संरक्षण में क्वांटम की भूमिकाः भविष्य का वैज्ञानिक कदम	32
28.	मानव बुद्धि बनाम कृत्रिम बुद्धिमत्ताः प्रतिस्पर्धा नहीं, समझदारी भरी साझेदारी का समय	33
29.	सुपर इंटेलिजेंस बनाम आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस	35
30.	साइबर सुरक्षा और तकनीकीः डिजिटल युग की अनिवार्य ढाल	37
31.	सूक्ष्म जगत की अनदेखी दुनियाः माइक्रोबियल जैव विविधता का विज्ञान	39
32.	जैविक कीट नियंत्रण और जैव विविधता का संतुलन	41
33.	गिद्धः जैव विविधता व पारिस्थितिकीय संतुलन में महत्वपूर्ण	42
34.	गैस के विकल्पः ऊर्जा संकट में उभरती नई राह	43
35.	बीज बचाओ आंदोलन के जनकः विजय जड़धारी और स्वदेशी बीजों की पुनर्जागरण कहानी	44
36.	रक्षा प्रौद्योगिकीः विज्ञान, रणनीति और शक्ति का नया युग	45
37.	STEM शिक्षाः बदलते समय की आधुनिक पढ़ाई	47
38.	प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणाली और आधुनिक विज्ञान–प्रौद्योगिकी का समन्वय	48
39.	जैव विविधता और उसका संरक्षणः प्रकृति की अमूल्य धरोहर	49
40.	जैव विविधता की सुरक्षा में अहम भूमिका निभा रहे हैं भारत और उत्तराखंड के राष्ट्रीय उद्यान	51
41.	ळडव और जैव प्रौद्योगिकीः विकास, पर्यावरण और नैतिक संतुलन की चुनौती	52
42.	टेक्नोलॉजी की मदद से जंगलों को आग से कैसे बचाएं: आसान और प्रभावी उपाय	54
43.	स्कूल इनोवेशन काउंसिलः नवाचार से उद्यमिता तक छात्रों की नई उड़ान	56
44.	उद्यमिता (Entrepreneurship): एक सोच, एक बदलाव	57
45.	पश्चिमी हिमालय की जैवविविधताः प्रकृति की अनमोल धरोहर	58
46.	इको क्लब फॉर मिशन लाइफः स्कूलों से शुरू हो रही हरित जीवनशैली की नई पहल	59

राष्ट्रीय तकनीकी दिवसः शक्ति, युक्ति और हमारी जिम्मेदारी

11 मई वह दिन है, जिसे पूरा देश 'राष्ट्रीय तकनीकी दिवस' के रूप में मनाता है। यह दिन केवल कैलेंडर की एक तारीख नहीं, बल्कि भारतीय वैज्ञानिकों के साहस और मेधा का प्रतीक है। आज से ठीक 28 वर्ष पहले, इसी दिन 1998 में, भारत ने पोखरण की तपती रेतीली धरती पर सफल परमाणु परीक्षण कर वैश्विक पटल पर अपनी वैज्ञानिक शक्ति का लोहा मनवाया था। यह दिवस डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जैसे महान वैज्ञानिकों और दूरदर्शी इंजीनियरों के सपनों को समर्पित है।

अक्सर जब हम 'तकनीकी' की बात करते हैं, तो हमारे मन में रॉकेट, सुपर कंप्यूटर या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) की छवियाँ उभरती हैं। लेकिन तकनीकी का वास्तविक उद्देश्य केवल मशीनों का निर्माण करना नहीं, बल्कि मानवीय जीवन की जटिलताओं को सरल बनाना है। वर्ष 2026 के इस दौर में, जब हम एक 'विकसित भारत' के संकल्प के साथ आगे बढ़ रहे हैं, तकनीकी की परिभाषा बदल रही है। अब चर्चा केवल सैन्य शक्ति या डिजिटल बढ़त की नहीं है, बल्कि 'सस्टेनेबल' यानी संवेदनशील तकनीकी की है।

हमारे जैसे हिमालयी परिवेश में रहने वाले विद्यार्थियों के लिए तकनीकी के मायने और भी गहरे हैं। यहाँ तकनीकी की असली सार्थकता तब है, जब वह हमारे पारंपरिक जल स्रोतों और 'स्प्रिंग बायोडायवर्सिटी' को बचाने में मददगार साबित हो। तकनीकी का सर्वोत्तम उपयोग वही है जो वनाग्नि जैसी प्राकृतिक आपदाओं को रोकने, जैविक खेती को आधुनिक बनाने और प्रकृति के सूक्ष्म पारिस्थितिकी तंत्र को संरक्षित करने में किया जाए। तकनीकी की वास्तविक विजय तभी मानी जाएगी, जब वह पर्यावरण को क्षति पहुँचाए बिना उसे और अधिक समृद्ध और सुंदर बनाए।

तकनीकी एक दोधारी तलवार की तरह होती है; यदि इसके संचालन में 'मानवीय संवेदना' का अभाव हो, तो यह विनाशकारी भी हो सकती है। इसलिए, आज के दिन हम सभी को यह संकल्प लेना चाहिए कि हम तकनीकी के केवल मूक उपभोक्ता (User) बनकर न रहें, बल्कि ऐसे जागरूक 'नवाचारी' (Innovator) बनें जो विज्ञान का उपयोग करुणा, नैतिकता और जिम्मेदारी के साथ करें।

विज्ञान हमें सामर्थ्य और शक्ति प्रदान करता है, लेकिन हमारे संस्कार और संवेदनाएं ही हमें उस शक्ति का सही दिशा में उपयोग करने का विवेक देती हैं। आइए, हम एक ऐसे भारत का सपना देखें और उसे साकार करें, जहाँ आधुनिक तकनीकी और आदि–अनंत प्रकृति एक साथ मुस्कुरा सकें।

- विशेष संदेशः

'तकनीकी का मस्तिष्क और संवेदना का हृदय–यही मेल एक बेहतर कल का निर्माण करेगा।'

हमारी शक्ति, हमारी पृथ्वीः प्रकृति के विज्ञान को समझने का समय

पृथ्वी दिवस 2026 की थीम "Our Power, Our Planet" वास्तव में हमारे और इस ग्रह के बीच उस गहरे वैज्ञानिक रिश्ते को रेखांकित करती है, जिसे विशेषज्ञ 'पारस्परिक निर्भरता' (Interdependence) कहते हैं। यह विचार हमें यह समझने के लिए प्रेरित करता है कि पृथ्वी की विशाल पारिस्थितिकी एक सूक्ष्म संतुलन पर टिकी है और हमारी सामूहिक ऊर्जा इस संतुलन को बनाए रखने का सबसे बड़ा वैज्ञानिक उपकरण है।

प्रकृति की कार्यप्रणाली को यदि हम विज्ञान की सरल दृष्टि से देखें, तो इसके कई रोचक और सार्थक उदाहरण सामने आते हैं। उदाहरण के लिए, जिस तरह एक एयर कंडीशनर कमरे के तापमान को नियंत्रित करता है, ठीक वैसे ही पृथ्वी के पास अपना प्राकृतिक 'थर्मोस्टेट' है। महासागर और घने जंगल हवा से अतिरिक्त गर्मी और कार्बन डाइऑक्साइड को सोखकर ग्रह को ठंडा रखते हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से, जब हम सामूहिक रूप से कार्बन उत्सर्जन और प्रदूषण को कम करते हैं, तो हम वास्तव में पृथ्वी के इसी 'कूलिंग सिस्टम' को पुनर्जीवित कर रहे होते हैं।

विज्ञान में एक अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्धांत है जिसे 'बटरफ्लाई इफेक्ट' कहा जाता है। यह बताता है कि एक छोटा सा स्थानीय बदलाव भी भविष्य में बड़े वैश्विक परिणाम ला सकता है। जब कोई समुदाय मिलकर 'रेन वाटर हार्वेस्टिंग' (वर्षा जल संचयन) जैसा छोटा कदम उठाता है, तो वह केवल पानी की बचत नहीं कर रहा होता, बल्कि वैज्ञानिक रूप से उस क्षेत्र के पूरे भू–जल स्तर (Groundwater Level) और जल–चक्र को रिचार्ज कर रहा होता है। यह छोटी सी शक्ति जब लाखों लोगों के साथ मिलती है, तो विलुप्त होती नदियों और प्राकृतिक सोतों को नया जीवन दे सकती है।

एक और रोचक आयाम प्रकृति की 'सर्कुलर इकोनॉमी' है। वैज्ञानिक सत्य यह है कि प्रकृति में कुछ भी 'कचरा' नहीं होता। एक सूखा पत्ता मिट्टी में मिलकर सूक्ष्मजीवों के माध्यम से फिर से पोषण बन जाता है। हमारी वैज्ञानिक शक्ति इसी प्राकृतिक चक्र में बाधा न डालने में निहित है। जब हम प्लास्टिक जैसे अजैविक पदार्थों का त्याग करते हैं, तो हम मिट्टी की उस जैव–रासायनिक क्षमता की रक्षा करते हैं जो जमीन को उपजाऊ और जीवनदायी बनाए रखती है।

अंततः, पृथ्वी को चलाने वाली मूल ऊर्जा का स्रोत सूर्य है। पौधे इस सौर ऊर्जा को फोटोकैमिस्ट्री के माध्यम से जीवन ऊर्जा में बदलते हैं। वैज्ञानिक समझ हमें सिखाती है कि जीवाश्म ईंधनों के बजाय नवीकरणीय ऊर्जा की ओर बढ़ना ही थर्मोडायनामिक्स के नियमों के अनुकूल है। विज्ञान हमें स्पष्ट संदेश देता है कि हम पृथ्वी के स्वामी नहीं, बल्कि इसके 'लाइफ सपोर्ट सिस्टम' के संरक्षक हैं। हमारी जागरूकता और ग्रह के नियमों के प्रति सम्मान ही वह सामूहिक शक्ति है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए एक संतुलित और जीवंत भविष्य सुनिश्चित करेगी।

"नीरी (NEERI):
भारत में पर्यावरण विज्ञान और अभियांत्रिकी का अग्रणी अनुसंधान संस्थान"

भारत में पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण और सतत विकास के क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान करने वाली प्रमुख संस्थाओं में CSIR & National Environmental Engineering Research Institute (नीरी) का विशेष स्थान है। यह एक राष्ट्रीय स्तर का अनुसंधान संस्थान है जिसकी स्थापना भारत सरकार द्वारा की गई और जिसे सरकार द्वारा ही वित्तपोषित किया जाता है।

नीरी की स्थापना वर्ष 1958 में Nagpur में की गई थी। प्रारम्भ में इस संस्थान का मुख्य उद्देश्य जल आपूर्ति, मल निकासी (सीवरेज), संक्रामक रोगों की रोकथाम तथा औद्योगिक प्रदूषण से संबंधित समस्याओं का वैज्ञानिक समाधान खोजना था। समय के साथ इसका कार्यक्षेत्र व्यापक होता गया और आज यह संस्थान पर्यावरण विज्ञान और पर्यावरण अभियांत्रिकी के क्षेत्र में भारत का अग्रणी अनुसंधान केंद्र बन चुका है।

नीरी, भारत की प्रतिष्ठित वैज्ञानिक संस्था Council of Scientific and Industrial Research (CSIR) के अधीन कार्य करता है। सीएसआईआर देश की सबसे बड़ी वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान संस्थाओं में से एक है, जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विविध क्षेत्रों में अत्याधुनिक अनुसंधान और विकास (R&D) कार्यों के लिए जानी जाती है। सीएसआईआर स्वयं Ministry of Science and Technology के अंतर्गत कार्य करता है। इस प्रकार नीरी राष्ट्रीय वैज्ञानिक ढांचे का एक महत्वपूर्ण अंग है जो पर्यावरण से जुड़ी चुनौतियों का वैज्ञानिक समाधान विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

नीरी का मुख्यालय नागपुर में स्थित है, लेकिन इसके अनुसंधान और तकनीकी सेवाओं को देशभर तक पहुँचाने के लिए इसकी कई क्षेत्रीय प्रयोगशालाएँ स्थापित की गई हैं। ये प्रयोगशालाएँ Chennai] Delhi, Hyderabad, Kolkata and Mumbai में स्थित हैं। इन प्रयोगशालाओं के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों की पर्यावरणीय समस्याओं का अध्ययन और समाधान विकसित किया जाता है।

नीरी का कार्य केवल सैद्धांतिक अनुसंधान तक सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यावहारिक समाधान और तकनीकी परामर्श भी प्रदान करता है। इसके प्रमुख कार्यक्षेत्रों में जल प्रदूषण और जल शोधन तकनीकी, वायु प्रदूषण नियंत्रण, औद्योगिक अपशिष्ट प्रबंधन, ठोस कचरा प्रबंधन, पर्यावरण प्रभाव आकलन (EIA) तथा पर्यावरणीय निगरानी और नीति परामर्श शामिल हैं। इन क्षेत्रों में किए गए अनुसंधान से सरकार, उद्योग और समाज को पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए वैज्ञानिक आधार मिलता है।

नीरी की दृष्टि (Vision) अत्यंत स्पष्ट और दूरदर्शी है– "सतत पोषणीय विकास (संपोषित विकास) हेतु पर्यावरण विज्ञान एवं अभियांत्रिकी के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करना।" इसका अर्थ है कि विकास की प्रक्रिया ऐसी हो जो पर्यावरण को क्षति पहुँचाए बिना आगे बढ़े और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाए कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी वे सुरक्षित रहें।

आज के समय में जब पर्यावरणीय संकट–जैसे प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और संसाधनों का अत्यधिक दोहन–मानव सभ्यता के सामने बड़ी चुनौती बन चुके हैं, तब यह संस्थान अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वैज्ञानिक अनुसंधान, तकनीकी नवाचार और व्यावहारिक समाधान के माध्यम से नीरी यह सुनिश्चित करने का प्रयास कर रहा है कि विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बना रहे। इसी कारण नीरी को भारत में पर्यावरण विज्ञान और अभियांत्रिकी के क्षेत्र में एक अग्रणी और विश्वसनीय संस्थान के रूप में माना जाता है।

स्प्रिंग बायोडायवर्सिटी: हिमालयी जीवन का अदृश्य आधार

हिमालय की वादियों में जब हम किसी झरने या श्स्प्रिंगश् को देखते हैं, तो अक्सर हमारा ध्यान केवल उसकी पानी की धारा पर जाता है। लेकिन विज्ञान की दृष्टि से, एक स्प्रिंग केवल जल का स्रोत नहीं, बल्कि एक जीवंत 'इको–सिस्टम' (पारिस्थितिकी तंत्र) है। इसी को हम 'स्प्रिंग बायोडायवर्सिटी' कहते हैं। यह सूक्ष्म जगत तकनीकी उन्नति और प्राकृतिक संवेदना के मिलन का सबसे सुंदर उदाहरण है।

एक स्प्रिंग जहाँ से फूटता है, उसके आसपास की नमी और विशेष तापमान के कारण एक विशिष्ट जैव विविधता पनपती है। यहाँ कई ऐसी काई (Mosses), फर्न और औषधीय पौधे उगते हैं जो कहीं और नहीं पाए जाते। साथ ही, ये स्प्रिंग्स कई प्रकार की तितलियों, ड्रैगनफ्लाई और पानी में रहने वाले छोटे जीवों का घर होते हैं। यहाँ पाए जाने वाले जीव 'बायो–इंडिकेटर' का काम भी करते हैं; यदि किसी झरने के पास विशेष प्रकार के कीट कम हो रहे हैं, तो यह सीधा संकेत है कि पानी की गुणवत्ता बदल रही है।

राष्ट्रीय तकनीकी दिवस के इस अवसर पर हमें यह समझना होगा कि आधुनिक तकनीकी कैसे इन प्राकृतिक स्रोतों की ढाल बन सकती है। डिजिटल मैपिंग (GIS) के माध्यम से हम हर एक स्प्रिंग का 'डिजिटल पहचान पत्र' बना सकते हैं, जिससे पता चलता है कि कौन सा स्रोत सूख रहा है और किसे तुरंत उपचार की जरूरत है। इसी तरह, 'आइसोटोप तकनीकी' की मदद से वैज्ञानिक यह पता लगा सकते हैं कि झरने का मुख्य 'रिचार्ज एरिया' कहाँ है, ताकि उस विशेष क्षेत्र में वृक्षारोपण कर पानी बढ़ाया जा सके। इसके अलावा, स्मार्ट सेंसर के जरिए हम वास्तविक समय (Real & time) में पानी की शुद्धता और उसकी मात्रा की निगरानी भी कर सकते हैं।

जैव विविधता दिवस (22 मई) हमें याद दिलाता है कि यह धरती केवल मनुष्यों के लिए नहीं है। झरने के पास पनपने वाली वह छोटी सी काई या वहां पानी पीने आने वाली चिड़िया भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। जब हम तकनीकी का उपयोग किसी स्प्रिंग को बचाने के लिए करते हैं, तो वह हमारी 'संवेदना' का विस्तार होता है।

आज जरूरत इस बात की है कि स्कूलों में पढ़ने वाले छात्र अपनी वैज्ञानिक सोच का उपयोग अपने आसपास के स्प्रिंग्स के अध्ययन में करें। छात्र अपने क्षेत्र के झरनों की सूची बनाएं और वहां पाए जाने वाले जीव–जंतुओं का अवलोकन कर डेटा संकलन करें। तकनीकी और परंपरा को जोड़कर सामुदायिक स्तर पर 'स्प्रिंग रक्षक' समूह बनाए जाने चाहिए।

स्प्रिंग बायोडायवर्सिटी हिमालय का वह 'सांस लेता' हिस्सा है, जो हमें जीवन देता है। तकनीकी का सही अर्थ तब सिद्ध होगा जब हम अपनी मशीनों और ज्ञान का उपयोग इन अनमोल मोतियों को सहेजने में करेंगे। विज्ञान जब संवेदना के साथ जुड़ता है, तभी प्रकृति मुस्कुराती है।

'प्रकृति मुस्कुराएगी, तो हम सुरक्षित रह पाएंगे'

अक्सर हम सुनते हैं कि 'पृथ्वी बचाओ' या 'पर्यावरण बचाओ'। लेकिन अगर हम वैज्ञानिक नजरिए से देखें, तो यह लड़ाई पृथ्वी को बचाने की नहीं, बल्कि खुद इंसान को बचाने की है। पृथ्वी का इतिहास अरबों साल पुराना है; उसने बड़े–बड़े महाविनाश झेले हैं और हर बार वह फिर से हरी–भरी हो गई। सच तो यह है कि प्रकृति अपना संतुलन बनाना जानती है, चुनौती यह है कि क्या हम इंसान उस संतुलन का हिस्सा बने रह पाएंगे?

1. खुद को बचाना ही प्रेरणा है

इसे डर के रूप में नहीं, बल्कि एक जिम्मेदारी के रूप में देखें। जब हम एक पेड़ लगाते हैं या किसी पानी के स्रोत (स्प्रिंग) को साफ रखते हैं, तो हम केवल प्रकृति पर उपकार नहीं कर रहे होते। हम वास्तव में अपनी सांसों के लिए शुद्ध हवा और अपनी प्यास के लिए स्वच्छ पानी का इंतजाम कर रहे होते हैं। पर्यावरण की रक्षा करना दरअसल अपने बच्चों और आने वाली पीढ़ियों के भविष्य की रक्षा करना है।

2. उम्मीद की नई किरणें

दुनिया भर में अब बदलाव की लहर दिख रही है, जो हमें उम्मीद देती है–

- साफ ऊर्जा: अब हम बिजली के लिए कोयले के बजाय सूरज (सौर ऊर्जा) और हवा (पवन ऊर्जा) का इस्तेमाल बढ़ा रहे हैं।
- मिट्टी और खेती: किसान अब ऐसी खेती की ओर लौट रहे हैं जिससे जमीन की ताकत बनी रहे और हमें शुद्ध भोजन मिले।
- जागरूक समाज: आज स्कूल के बच्चों से लेकर बड़ों तक, हर कोई वैज्ञानिक सोच के साथ पर्यावरण को समझने लगा है।

3. गहरा रिश्ता: हम और प्रकृति

प्रकृति हमारे लिए सिर्फ सामान जुटाने का साधन नहीं है। जंगल सिर्फ लकड़ी नहीं देते, वे हमारे मौसम को संतुलित रखते हैं। नदियाँ सिर्फ पानी नहीं ढोतीं, वे हमारी सभ्यताओं को जिंदा रखती हैं। धरती पर मौजूद हर छोटा जीव–चाहे वह तितली हो या कोई सूक्ष्म कीड़ा–जीवन के उस जाल का हिस्सा है जो हमें सहारा देता है।

4. विकास का नया मतलब

अगर हम यह समझ लें कि प्रकृति को बचाना ही खुद को बचाना है, तो तरक्की की परिभाषा बदल जाएगी। तब तरक्की का मतलब सिर्फ ऊँची इमारतें या सड़कें बनाना नहीं होगा, बल्कि ऐसी प्रगति होगा जिसमें हमारी नदियाँ भी साफ रहें और हमारे जंगल भी सुरक्षित रहें।

पर्यावरण की सुरक्षा कोई डर का विषय नहीं है, बल्कि एक शानदार भविष्य बनाने का मौका है। हमारे पास ज्ञान भी है और विज्ञान भी। अगर हम आज अपनी तकनीकी और अपनी समझ को प्रकृति के साथ जोड़ दें, तो हम एक ऐसा कल बना सकते हैं जहाँ इंसान और धरती दोनों खुशहाल रहें। खुद को बचाने से शुरू हुई यह यात्रा, सबके साथ मिलकर रहने (सह–अस्तित्व) पर खत्म होगी।

'प्रकृति के साथ चलना ही बुद्धिमानी है। जब हम धरती का सम्मान करते हैं,
तो हम वास्तव में अपनी सभ्यता और अपने भविष्य को सुरक्षित करते हैं।'

'फूलदेई: उत्तराखंड की जैव–विविधता और मानव जीवन का उत्सव'

उत्तराखंड की पहाड़ियों में जब चैत्र मास की संक्रांति आती है, तो वह अपने साथ केवल वसंत की आहट ही नहीं लाती, बल्कि प्रकृति और मानव जीवन के गहरे संबंध का संदेश भी देती है। इस समय मनाया जाने वाला 'फूलदेई पर्व' केवल एक सांस्कृतिक परंपरा नहीं, बल्कि उत्तराखंड की समृद्ध जैव–विविधता और प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व का वैज्ञानिक उत्सव है।

हम अक्सर कहते हैं कि "पृथ्वी को बचाना है", लेकिन वैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो पृथ्वी ने अरबों वर्षों में अनेक महाविनाशों और जलवायु परिवर्तनों का सामना किया है और हर बार स्वयं को पुनर्जीवित किया है। वास्तविक चुनौती यह है कि क्या मानव सभ्यता उस प्राकृतिक संतुलन का हिस्सा बनी रह पाएगी। फूलदेई हमें इसी संतुलन और सह–अस्तित्व की शिक्षा देता है।

इस पर्व में गाँव की छोटी लड़कियाँ 'फुल्यारी' बनकर जंगलों से मौसम के पहले फूल–फ्योंली, बुरांश तथा अन्य ताजे फूल–चुनकर लाती हैं। यह परंपरा केवल एक सांस्कृतिक गतिविधि नहीं है, बल्कि अनजाने में स्थानीय वनस्पतियों की पहचान और संरक्षण की एक सामाजिक प्रक्रिया भी है। बच्चे और समुदाय प्रकृति के इन फूलों के माध्यम से यह सीखते हैं कि पहाड़ों की पारिस्थितिकी और जैव–विविधता उनके जीवन का आधार है।

जब वे गाती हैं– **"फूल देई, चम्मा देई, देनो द्वार, भूर भाकर..."** –तो यह गीत वास्तव में हर घर की देहली पर प्रकृति की समृद्धि और जैव–विविधता का स्वागत होता है। यह परंपरा समाज को यह संदेश देती है कि जंगल, वनस्पति और स्थानीय पारिस्थितिकी केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं, बल्कि जीवन का आधार हैं। यदि ये सुरक्षित रहेंगे, तभी मानव समाज भी सुरक्षित रह सकेगा।

फूलदेई के पर्व में 'देई' का विशेष महत्व है–गुड़ और सफेद आटे से बना पारंपरिक हलवा। यह केवल एक व्यंजन नहीं, बल्कि मौसम के परिवर्तन के समय शरीर को ऊर्जा और पोषण देने का वैज्ञानिक तरीका भी है। हमारे पूर्वज जानते थे कि प्रकृति के साथ तालमेल रखते हुए भोजन और जीवनशैली को अपनाना स्वास्थ्य और उत्तरजीविता के लिए आवश्यक है।

फूलदेई का एक महीने तक चलना भी सामाजिक और पारिस्थितिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह समुदाय को फसलों के चक्र, जंगलों की स्थिति और मौसम के बदलावों के प्रति जागरूक बनाए रखता है। इस प्रकार यह पर्व पारंपरिक ज्ञान और पर्यावरणीय समझ का जीवंत उदाहरण बन जाता है।

आज जब हम जैव–विविधता संरक्षण, जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय संकट की बात करते हैं, तब फूलदेई जैसे पर्व हमें याद दिलाते हैं कि प्रकृति के साथ संतुलन बनाए रखना केवल एक नैतिक जिम्मेदारी नहीं, बल्कि हमारे अस्तित्व की आवश्यकता है।

यदि उत्तराखंड के जंगल सुरक्षित रहेंगे, यदि पहाड़ों की जैव–विविधता संरक्षित रहेगी, तभी वसंत में ये फूल खिलेंगे और तभी हमारी देहली पर खुशहाली आएगी।

उत्तराखंड के पहाड़ों में पाए जाने वाले पक्षियों की विविधता

हिमालय की गोद में बसे उत्तराखंड के पहाड़ केवल प्राकृतिक सौंदर्य के लिए ही नहीं, बल्कि अपनी अद्भुत जैव–विविधता के लिए भी प्रसिद्ध हैं। घने जंगल, बर्फ से ढकी चोटियाँ, अल्पाइन घास के मैदान, नदियाँ और झरने मिलकर यहाँ एक ऐसा पारिस्थितिक तंत्र बनाते हैं, जहाँ सैकड़ों प्रकार के पक्षी अपना घर बनाते हैं। यही कारण है कि उत्तराखंड को भारत के सबसे महत्वपूर्ण 'बर्डिंग क्षेत्रों' में गिना जाता है।

उत्तराखंड के पहाड़ों में रंग–बिरंगे और दुर्लभ पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें हिमालय का राज्य पक्षी 'हिमालयन मोनाल, अपनी चमकीली और इंद्रधनुषी आभा के कारण सबसे आकर्षक माना जाता है। इसके अलावा ''वर्डिटर फ्लायकैचर, ''रूफस–बेलिड निल्टावा, ''ब्लू–फ्रंटेड रेडस्टार्ट, ''ब्लैक–थ्रोटेड टिट, ''ब्लू–विंग्ड मिनला, और ''ग्रे–हुडेड वार्बलर' जैसे छोटे लेकिन अत्यंत सुंदर पक्षी भी इन पहाड़ों में आसानी से देखे जा सकते हैं। इन पक्षियों के रंग और व्यवहार प्रकृति के अद्भुत सौंदर्य का परिचय देते हैं।

उत्तराखंड के जंगलों में कुछ विशेष पक्षी भी पाए जाते हैं, जिनका संबंध सीधे हिमालयी पारिस्थितिकी से है। उदाहरण के लिए 'ग्रेटर येलोनैप' और अन्य कठफोड़वा पेड़ों की छाल में छिपे कीटों को निकालते हैं, जिससे जंगलों में कीट नियंत्रण बना रहता है। वहीं 'सनबर्ड' जैसे छोटे पक्षी फूलों का रस पीते समय परागण में मदद करते हैं। इस प्रकार पक्षी केवल सौंदर्य ही नहीं बढ़ाते, बल्कि पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन पहाड़ों में कुछ बड़े और दुर्लभ पक्षी भी मिलते हैं, जैसे 'कालिज तीतर, ''चीयर तीतर, और ''ब्राउन फिश आउल। नदियों और जलधाराओं के पास ''क्रेस्टेड किंगफिशर' जैसे पक्षी मछलियों का शिकार करते हुए दिखाई देते हैं। वहीं ऊँचे वृक्षों और जंगलों में 'ब्लैक–हेडेड जे' और 'रेड–बिल्ड ब्लू मैगपाई' जैसे बुद्धिमान और सक्रिय पक्षी भी देखने को मिलते हैं।

उत्तराखंड के पहाड़ों में पक्षियों की यह विविधता केवल स्थानीय प्रजातियों तक सीमित नहीं है। हर वर्ष सर्दियों के मौसम में कई 'प्रवासी पक्षी' भी यहाँ आते हैं। वे ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों से नीचे घाटियों और जंगलों की ओर आते हैं और मौसम अनुकूल होने पर फिर अपने मूल स्थानों की ओर लौट जाते हैं। इससे यहाँ की जैव–विविधता और भी समृद्ध हो जाती है। हालाँकि आज बढ़ते शहरीकरण, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन के कारण इन पक्षियों के प्राकृतिक आवास पर खतरा बढ़ रहा है। इसलिए इनके संरक्षण के लिए जंगलों की रक्षा, प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग और पर्यावरण के प्रति जागरूकता अत्यंत आवश्यक है।

उत्तराखंड के पहाड़ों में गूँजती पक्षियों की मधुर आवाज़ें हमें यह याद दिलाती हैं कि प्रकृति कितनी समृद्ध और संवेदनशील है। यदि हम इस प्राकृतिक धरोहर को सहेज कर रखें, तो आने वाली पीढ़ियाँ भी हिमालय के इन सुंदर और रंग–बिरंगे पक्षियों को उसी आनंद के साथ देख सकेंगी, जैसे आज हम देखते हैं।

प्रोफेसर (डॉ.) जी. के. धींगराः विज्ञान की साधना और शोध के शिखर पुरुष

उच्च शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसंधान की दुनिया में प्रोफेसर (डॉ.) गुलशन कुमार धींगरा एक ऐसा नाम हैं, जिन्होंने अपनी विद्वत्ता, शोधपरक दृष्टि और सरल व्यक्तित्व से अकादमिक जगत में विशिष्ट पहचान बनाई है। वनस्पति विज्ञान (Botany) और बायोटेक्नोलॉजी (Biotechnology) के क्षेत्र में उनका योगदान उल्लेखनीय रहा है। वर्तमान में वे श्रीदेव सुमन उत्तराखंड विश्वविद्यालय के पंडित ललित मोहन शर्मा परिसर ऋषिकेश में कई महत्वपूर्ण शैक्षणिक और प्रशासनिक दायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वहन कर चुके हैं।

प्रो. धींगरा विश्वविद्यालय में विज्ञान संकाय के प्रथम डीन के रूप में कार्य कर चुके हैं। वर्तमान वे IQAC एवं R&D सेल के डायरेक्टर (अकादमिक) तथा बी.एससी. एम.एल.टी. (B.Sc. MLT) कार्यक्रम के समन्वयक के रूप में भी अपनी जिम्मेदारियाँ निभा रहे हैं। इन पदों पर रहते हुए वे विश्वविद्यालय में शिक्षा की गुणवत्ता, शोध संस्कृति और नवाचार को निरंतर प्रोत्साहित कर रहे हैं। उनके नेतृत्व में कई शैक्षणिक समझौते (MOU) हुऐ हैं। जोकि राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय संस्थानो के साथ किए गये जिसका लाभ विद्यार्थियों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण और व्यावहारिक ज्ञान से समृद्ध करने में महत्वपूर्ण हैं।

विज्ञान के विस्तृत क्षेत्र में प्रो. धींगरा का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। पौधों की शारीरिक क्रियाओं (Plant Physiology), पारिस्थितिकी (Ecology), साइटोजेनेटिक्स तथा बायोटेक्नोलॉजी जैसे आधुनिक विषयों पर उनकी विशेषज्ञता है। उनके कई शोध कार्य राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर की प्रतिष्ठित शोध जर्नल में प्रकाशित हो चुके हैं। वर्ष 2018 में अंतर्राश्ट्रीय प्रकाशन संस्थान Elsevier से प्रकाशित इनके निर्देशन में शोध छात्रों द्वारा किये गये कार्य "Inoculation of siderophore producing rhizobacteria and their consortium for growth enhancement of wheat plant" में यह दर्शाया गया कि सूक्ष्मजीवों की सहायता से पौधों की वृद्धि को किस प्रकार बेहतर बनाया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त वनस्पति विज्ञान के शैक्षणिक एवं शोध में भी उनका योगदान उल्लेखनीय है। "Pteridophyta, Gymnosperm and Elementary Paleobotany" जैसे विषयों पर उनका पुस्तक अध्याय विद्यार्थियों और शोधार्थियों के लिए उपयोगी संदर्भ सामग्री प्रदान करता है।

प्रो. धींगरा केवल प्रयोगशालाओं तक सीमित वैज्ञानिक नहीं हैं, बल्कि वे प्रकृति प्रेमी और दूरदर्शी शिक्षाविद् भी हैं। उनका मानना है कि विज्ञान केवल ज्ञान अर्जन का माध्यम नहीं, बल्कि समाज और प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व निभाने का एक सशक्त साधन है। हिमालयी पारिस्थितिकी, जैव–विविधता संरक्षण और पर्यावरणीय संतुलन के प्रति उनकी गहरी संवेदनशीलता उनके शोध और विचारों में स्पष्ट दिखाई देती है।

अपने शोध, शिक्षण और प्रशासनिक अनुभव के माध्यम से उन्होंने अनेक शोधार्थियों और विद्यार्थियों को वैज्ञानिक अनुसंधान की दिशा में प्रेरित किया है। उनकी विद्वत्ता, विनम्रता और मार्गदर्शक व्यक्तित्व के कारण वे छात्रों और सहकर्मियों के बीच एक सच्चे गुरु और प्रेरणास्रोत के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

'राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, उत्तराखंड (NIT Uttarakhand), श्रीनगर (गढ़वाल)'

राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, उत्तराखंड की स्थापना '2009 में भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा संसद के अधिनियम के अंतर्गत' की गई। यह देश के 'राष्ट्रीय महत्व के संस्थानों (Institute of National Importance)' में शामिल है और भारत के 31 राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थानों में से एक है।

यह संस्थान उत्तराखंड के 'पौड़ी गढ़वाल जिले के श्रीनगर' में अलकनंदा नदी के निकट स्थित है। शांत और प्राकृतिक हिमालयी वातावरण में स्थित होने के कारण यह संस्थान तकनीकी शिक्षा और अनुसंधान के लिए प्रेरणादायक वातावरण प्रदान करता है।

संस्थान में 'कंप्यूटर साइंस एंड इंजीनियरिंग, इलेक्ट्रिकल एंड इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग, इलेक्ट्रॉनिक्स एंड कम्युनिकेशन इंजीनियरिंग, मैकेनिकल इंजीनियरिंग और सिविल इंजीनियरिंग' जैसे प्रमुख विषयों में बी.टेक. कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं। यहाँ एम.टेक. और पीएच.डी. स्तर पर भी इंजीनियरिंग, विज्ञान और मानविकी विषयों में अध्ययन एवं अनुसंधान की सुविधा उपलब्ध है।

बी.टेक. कार्यक्रमों में प्रवेश JEE Main के माध्यम से तथा एम.टेक. में प्रवेश GATE परीक्षा के आधार पर दिया जाता है।

राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग ढाँचे (NIRF 2024) में यह संस्थान इंजीनियरिंग श्रेणी में '101–150 रैंक बैंड' में शामिल रहा है, जो इसकी शैक्षणिक और अनुसंधान क्षमता को दर्शाता है। (Boost My Talent,3,)

इस प्रकार 'NIT उत्तराखंड' उत्तराखंड और पूरे देश में तकनीकी शिक्षा, अनुसंधान और नवाचार को आगे बढ़ाने वाला एक महत्वपूर्ण संस्थान बन चुका है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की (IIT Roorkee)

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की उत्तराखंड के रुड़की शहर में स्थित भारत का एक प्रमुख तकनीकी संस्थान है। इसकी शुरुआत '1847 में थॉमसन कॉलेज ऑफ सिविल इंजीनियरिंग' के रूप में हुई थी। बाद में यह 'रुड़की विश्वविद्यालय' बना और वर्ष '2001 में इसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT)' का दर्जा मिला। इस प्रकार यह भारत के सबसे पुराने इंजीनियरिंग संस्थानों में से एक है।

आज IIT रुड़की लगभग 365 एकड़ में फैले विशाल परिसर में स्थापित है। यहाँ 23 शैक्षणिक विभाग और कई शोध केंद्र कार्य कर रहे हैं। संस्थान में बी.टेक., बी.आर्क., एम.टेक., एम.एससी., एमबीए और पीएच. डी. जैसे विभिन्न पाठ्यक्रम संचालित होते हैं। बी.टेक. में प्रवेश JEE Advanced परीक्षा के माध्यम से होता है, जो भारत की सबसे कठिन प्रतियोगी परीक्षाओं में से एक मानी जाती है।

IIT रुड़की शिक्षा के साथ–साथ 'अनुसंधान और नई तकनीकों के विकास' के लिए भी प्रसिद्ध है। यहाँ जल संसाधन, भूकंप अभियांत्रिकी, पर्यावरण इंजीनियरिंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और ऊर्जा जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण शोध कार्य किए जाते हैं।

लंबे इतिहास, उच्च स्तर की शिक्षा और वैज्ञानिक शोध के कारण IIT रुड़की आज भारत के प्रमुख तकनीकी संस्थानों में गिना जाता है और यहाँ से निकले छात्र देश–विदेश में विज्ञान, उद्योग और तकनीकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

उत्तराखंड के राज्य सरकार के प्रमुख तकनीकी संस्थान

उत्तराखंड में तकनीकी शिक्षा के विकास में राज्य सरकार के संस्थानों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ये संस्थान इंजीनियरिंग, प्रौद्योगिकी, कृषि अभियांत्रिकी और कंप्यूटर विज्ञान जैसे क्षेत्रों में युवाओं को उच्च शिक्षा और तकनीकी कौशल प्रदान कर रहे हैं।

'वीर माधो सिंह भंडारी उत्तराखंड तकनीकी विश्वविद्यालय, देहरादून'

देहरादून स्थित यह विश्वविद्यालय राज्य का प्रमुख तकनीकी विश्वविद्यालय है। इसकी स्थापना '2005 में उत्तराखंड तकनीकी विश्वविद्यालय' के रूप में हुई थी और बाद में इसका नाम वीर माधो सिंह भंडारी के सम्मान में रखा गया। यह विश्वविद्यालय राज्य के अनेक इंजीनियरिंग, फार्मेसी, आर्किटेक्चर और प्रबंधन कॉलेजों को संबद्धता प्रदान करता है।

'गोविंद बल्लभ पंत इंजीनियरिंग कॉलेज, पौड़ी'

पौड़ी में स्थित यह उत्तराखंड का प्रमुख सरकारी इंजीनियरिंग कॉलेज है, जिसकी स्थापना '1989 में' हुई। यहाँ सिविल, मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल, कंप्यूटर साइंस और इलेक्ट्रॉनिक्स जैसे विषयों में तकनीकी शिक्षा दी जाती है।

'कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी, जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर'

पंतनगर स्थित यह संस्थान '1962 में' स्थापित हुआ और कृषि अभियांत्रिकी, मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल तथा कंप्यूटर इंजीनियरिंग जैसे क्षेत्रों में शिक्षा और अनुसंधान का महत्वपूर्ण केंद्र है।

'बिपिन चंद्र त्रिपाठी कुमाऊँ इंजीनियरिंग कॉलेज, द्वाराहाट (अल्मोड़ा)'

'1991 में स्थापित' यह संस्थान कुमाऊँ क्षेत्र का प्रमुख सरकारी इंजीनियरिंग कॉलेज है। यहाँ कंप्यूटर साइंस, इलेक्ट्रॉनिक्स, मैकेनिकल और इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग जैसे विषयों में शिक्षा दी जाती है।

ये सभी संस्थान मिलकर उत्तराखंड में तकनीकी शिक्षा, वैज्ञानिक सोच और नवाचार को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

उत्तराखंड जैव प्रौद्योगिकी परिषद, पंतनगर।

उत्तराखंड अपनी समृद्ध जैव–विविधता, औषधीय पादपों और विशिष्ट पर्वतीय पारिस्थितिकी के लिए प्रसिद्ध है। इन प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण तथा उनके वैज्ञानिक उपयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से उत्तराखंड जैव प्रौद्योगिकी परिषद (यूसीबी) की स्थापना की गई। यह परिषद उधम सिंह नगर जिले के पंतनगर में स्थित है, जो लंबे समय से कृषि, वैज्ञानिक अनुसंधान व नवाचार का प्रमुख केंद्र रहा है।

इस पहल की शुरुआत फरवरी 2003 में हल्दी पंतनगर में राज्य जैव प्रौद्योगिकी कार्यक्रम (स्टेट बायोटेक्नोलॉजी प्रोग्राम) के रूप में हुई। इसका उद्देश्य राज्य की विशेष आवश्यकताओं के अनुरूप जैव प्रौद्योगिकी आधारित कृषिकरण, शिक्षा, शोध व नवाचार को प्रदेश मे बढ़ाने के लिए किया गया।

वर्ष 2014 में इस कार्यक्रम का विस्तार करते हुए इसे उत्तराखंड जैव प्रौद्योगिकी परिषद के रूप में नया स्वरूप दिया गया और इसे विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, उत्तराखंड शासन के अंतर्गत रखा गया। तदोपरान्त 2019 के शासन के आदेश के क्रम मे परिषद को कृषि विभाग, उत्तराखंड शासन के अधीन कर दिया गया।

परिषद राज्य में जैव प्रौद्योगिकी आधारित अनुसंधान, तकनीकी विकास और वैज्ञानिक सहयोग को बढ़ावा दे रही है। इसके अलावा उत्तराखंड की जैव–विविधता के संरक्षण और सतत विकास की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। साथ ही विभिन्न योजनाओं व गतिविधिओं के माध्यम से समाज के हर एक वर्ग को लाभ पहुंचा रही है। परिषद द्वारा आयोजित कौशल विकास कार्यक्रम के माध्यम से अनुभवी वैज्ञानिकों के दिशा–निर्देश मे प्रदेश के युवाओं को प्रशिक्षण देकर स्वरोजगार के लिए प्रेरित कर रही है। उद्यमिता विकास व नवाचार कार्यक्रम से परिषद युवाओं को स्टार्टअप्स के लिए प्रोत्साहित कर रही है।

जब बिजली नहीं, रोशनी दौड़ेगी डेटा–क्वांटम भौतिकी का नया मोड़

हम रोज़ मोबाइल चलाते हैं, इंटरनेट इस्तेमाल करते हैं और कंप्यूटर पर काम करते हैं–लेकिन शायद ही हम यह सोचते हों कि इन सबके पीछे डेटा कैसे चलता है। आज की पूरी डिजिटल दुनिया इलेक्ट्रॉनों (बिजली) पर आधारित है। जब इलेक्ट्रॉन तारों और चिप्स के भीतर चलते हैं, तो वे ऊर्जा खोते हैं और गर्मी पैदा करते हैं। यही कारण है कि हमारे लैपटॉप गर्म हो जाते हैं और बड़े डेटा सेंटर को ठंडा रखने में भारी ऊर्जा खर्च होती है।

यहीं से शुरू होती है एक नई वैज्ञानिक कहानी–

क्या डेटा को बिजली के बजाय प्रकाश से भेजा जा सकता है?

भौतिकी में एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है 'क्वांटम हॉल इफेक्ट'। इसमें इलेक्ट्रॉन एक विशेष परिस्थिति (बहुत कम तापमान और मजबूत चुंबकीय क्षेत्र) में ऐसे रास्तों पर चलते हैं जहाँ वे बिना रुकावट और बिना ऊर्जा खोए आगे बढ़ते हैं। इसे ऐसे समझिए जैसे एक हाईवे हो जहाँ कोई ट्रैफिक, कोई बाधा न हो–सीधा, सुरक्षित और तेज़ रास्ता।

अब वैज्ञानिकों ने इसी विचार को एक नए स्तर पर पहुँचाया है। हालिया शोध (Physical Review Letters) में यह दिखाया गया है कि 'प्रकाश के कण–फोटॉन्स–भी इसी तरह नियंत्रित रास्तों पर चल सकते हैं। इसके लिए वैज्ञानिकों ने ''फोटोनिक क्रिस्टल' नामक विशेष संरचना बनाई, जो प्रकाश के प्रवाह को दिशा देती है।

यह खोज क्यों खास है?

आसान भाषा में समझें तो–अब हम 'प्रकाश को "लाइन में चलाना" सीख रहे हैं'।
जब प्रकाश बिना बिखरे, बिना टकराए एक निश्चित दिशा में चलता है, तो डेटा ट्रांसमिशन बेहद तेज़ और ऊर्जा–कुशल हो जाता है।

इसका व्यवहारिक महत्व

- 'कंप्यूटर और मोबाइल': भविष्य में चिप्स में इलेक्ट्रॉन की जगह फोटॉन्स का उपयोग हो सकता है, जिससे डिवाइस कम गर्म होंगे और अधिक तेज़ चलेंगे।
- 'इंटरनेट स्पीड': डेटा प्रकाश के माध्यम से लगभग बिना नुकसान के यात्रा करेगा, जिससे स्पीड और स्थिरता बढ़ेगी।
- 'ऊर्जा बचत': डेटा सेंटर और सर्वर की कूलिंग की जरूरत कम होगी, जिससे बिजली की खपत घटेगी।
- 'क्वांटम तकनीकी': यह खोज क्वांटम कंप्यूटिंग और सुरक्षित संचार (Quantum Communication) के लिए भी महत्वपूर्ण है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से क्या बदल रहा है?

यह शोध हमें यह समझने में मदद करता है कि 'क्वांटम नियम केवल इलेक्ट्रॉनों तक सीमित नहीं हैं'। प्रकृति के ये नियम प्रकाश जैसे कणों पर भी लागू हो सकते हैं–बस हमें सही संरचना (जैसे फोटोनिक क्रिस्टल) बनानी होती है।

यह एक बड़ा बदलाव है, क्योंकि अब तक हम इलेक्ट्रॉनिक दुनिया में सोचते थे, लेकिन अब हम धीरे–धीरे 'फोटोनिक (प्रकाश आधारित) दुनिया' की ओर बढ़ रहे हैं।

यह खोज केवल प्रयोगशाला की उपलब्धि नहीं है, बल्कि आने वाले समय की तकनीकी क्रांति की नींव है। जिस तरह बिजली ने औद्योगिक युग को बदल दिया था, उसी तरह 'प्रकाश आधारित तकनीकी डिजिटल युग को एक नई गति दे सकती है'।

विज्ञान हमें यह सिखाता है कि छोटे–छोटे सिद्धांत, जब व्यवहार में उतरते हैं, तो पूरी दुनिया बदल सकते हैं। और शायद आने वाले वर्षों में, आपके मोबाइल और कंप्यूटर में "डेटा की रोशनी" ही सबसे तेज़ दौड़ रही होगी।

भविष्य की सड़कें: जब रास्ते खुद बोलेंगे–"सावधान, मैं टूटने वाला हूँ!"

सोचिए कि हम अपनी कार से सफर कर रहे हैं। आसमान में बादल हैं और हल्की बारिश हो रही है। अचानक हमारे मोबाइल या डैशबोर्ड पर एक संदेश चमकता है– "आगे 300 मीटर पर सड़क की सतह कमजोर हो रही है, कृपया गति कम करें।" हम सतर्क हो जाते हैं और कुछ ही मिनटों बाद देखते हैं कि उस स्थान पर वास्तव में सड़क धंस चुकी है। यह कोई काल्पनिक कहानी नहीं, बल्कि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) की मदद से भारत की सड़कों का आने वाला वैज्ञानिक भविष्य है।

स्मार्ट सड़कें: तकनीकी और समझ का संगम

अब तक हम सड़कों को केवल पत्थर, डामर और कंक्रीट का एक 'निष्क्रिय ढांचा' मानते आए हैं। लेकिन AI इस सोच को 'सक्रिय प्रणाली' में बदल रहा है। स्मार्ट सड़कें वे होंगी जहाँ सेंसर (Sensors), हाई–टेक कैमरे और डेटा विश्लेषण एक साथ काम करेंगे। ये सड़कें लगातार अपनी 'सेहत' पर नजर रखेंगी और बताएंगी कि कहाँ दबाव ज्यादा है, कहाँ दरार बन रही है या कहाँ पानी जमा होकर नुकसान पहुँचा सकता है।

डिजिटल ट्विन: सड़क का वर्चुअल प्रतिबिंब

इस क्रांति का सबसे शक्तिशाली हिस्सा है 'डिजिटल ट्विन' (Digital Twin) तकनीक। इसमें वास्तविक सड़क का एक हूबहू डिजिटल मॉडल बनाया जाता है।

- **पूर्वानुमान:** यह मॉडल ट्रैफिक के वास्तविक डेटा, मौसम के प्रभाव और निर्माण सामग्री के घिसाव का विश्लेषण करता है।

- **भविष्य की गणना:** यदि किसी सड़क पर भारी वाहनों का दबाव बढ़ता है, तो AI पहले ही बता देगा– "यह हिस्सा अगले 10 दिनों में कमजोर हो सकता है।" इससे इंजीनियर बड़े हादसे होने से पहले ही मरम्मत कर सकेंगे।

कैसे काम करेगा यह 'लिविंग सिस्टम'?

यह प्रणाली चार मुख्य चरणों में काम करती है:

- डेटा संग्रह: सड़क के नीचे लगे सेंसर कंपन, तापमान, नमी और भार (Load) को मापते हैं।
- रीयल–टाइम प्रोसेसिंग: यह डेटा तुरंत कंट्रोल सेंटर में AI एल्गोरिद्म द्वारा विश्लेषित किया जाता है।
- जोखिम आकलन: AI तय करता है कि खतरा कितना गंभीर है।
- अलर्ट और कार्रवाई: ड्राइवर, ट्रैफिक पुलिस और मेंटेनेंस टीम को तुरंत सूचना भेजी जाती है। साथ ही, AI यह भी सुझाता है कि वहाँ किस प्रकार की मरम्मत सबसे प्रभावी होगी।

भारत के लिए 'गेम–चेंजर'

63 लाख किलोमीटर लंबे सड़क नेटवर्क वाले भारत के लिए यह तकनीकी वरदान साबित होगी।

- मानसून और गड्ढे: भारत में बारिश सड़कों की सबसे बड़ी दुश्मन है। नमी सेंसर पानी के स्तर को मापकर गड्ढा बनने से पहले ही चेतावनी दे देंगे– यानी 'गड्ढा बनने से पहले ही गड्ढा खत्म'।
- सुरक्षा: हर साल होने वाली 1.5 लाख से अधिक मौतों के आंकड़ों को इस तकनीकी से काफी हद तक कम किया जा सकता है।

- ट्रैफिक और पर्यावरण: रीयल–टाइम डेटा से ट्रैफिक प्रबंधन बेहतर होगा, जिससे जाम में कमी आएगी। कम जाम का मतलब है कम ईंधन की खपत और कम प्रदूषण।

बड़े फायदों पर एक नज़र

- इमरजेंसी रिस्पॉन्स: एम्बुलेंस और पुलिस 60: तक तेजी से मौके पर पहुँच सकती है।
- आर्थिक बचत: समय रहते मरम्मत होने से बड़े पुनर्निर्माण का खर्च बचेगा।
- EV कॉरिडोर: ये सड़कें इलेक्ट्रिक वाहनों (EV) के लिए स्मार्ट चार्जिंग और सुरक्षित मार्ग सुनिश्चित करेंगी।

चुनौतियाँ और आधुनिक पहल

भारत में NHAI (नेशनल हाईवे अथॉरिटी ऑफ इंडिया) ने इस दिशा में कदम बढ़ा दिए हैं। निर्माण की गुणवत्ता जांचने के लिए AI आधारित प्रोजेक्ट मैनेजमेंट सिस्टम का उपयोग शुरू हो चुका है। हालांकि, उच्च लागत और डेटा सुरक्षा जैसी चुनौतियाँ अभी भी हैं, लेकिन तकनीकी के सुलभ होने के साथ ये बाधाएं दूर हो जाएंगी।

अब कह सकते हैं कि आने वाले समय में सड़कें केवल गंतव्य तक पहुँचने का माध्यम नहीं होंगी, बल्कि वे हमारे शरीर की तरह एक 'जीवित प्रणाली' बन जाएंगी, जो दर्द (दबाव) को महसूस करेंगी और समय रहते सुरक्षा का उपाय बताएंगी। यह तकनीकी बदलाव केवल इंजीनियरिंग का चमत्कार नहीं, बल्कि एक सुरक्षित और आधुनिक भारत के निर्माण की नींव है।

अब सड़कें चुप नहीं रहेंगी– वे बोलेंगी, चेताएँगी और हमारी जान बचाएँगी।

विज्ञान और न्याय का सशक्त सेतुः डॉ. राजेश सिंह

डॉ. राजेश सिंह उन वैज्ञानिकों में से हैं जिन्होंने फॉरेंसिक विज्ञान को केवल एक तकनीकी क्षेत्र नहीं, बल्कि न्याय व्यवस्था की रीढ़ के रूप में स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। राजस्थान के राजस्थान राज्य फॉरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला (FSL), जयपुर में अतिरिक्त निदेशक के रूप में कार्यरत रहते हुए उन्होंने वैज्ञानिक साक्ष्यों के माध्यम से अपराध जांच को अधिक सटीक, तेज और विश्वसनीय बनाने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है।

फॉरेंसिक विज्ञान का मूल उद्देश्य है—अपराध की सच्चाई को विज्ञान के माध्यम से उजागर करना। डॉ. राजेश सिंह ने इस उद्देश्य को अपने कार्य का केंद्र बनाया है। DNA विश्लेषण, अपराध स्थल की वैज्ञानिक जांच और आधुनिक तकनीकों के उपयोग में उनकी विशेषज्ञता ने अनेक जटिल मामलों को सुलझाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनके नेतृत्व में प्रयोगशाला की टीम ने हजारों मामलों में सटीक और समयबद्ध रिपोर्ट देकर न्यायिक प्रक्रिया को मजबूती प्रदान की है। उनकी कार्यशैली की विशेषता है—अनुशासन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और नवाचार। वे न केवल प्रयोगशाला के संचालन में दक्ष हैं, बल्कि युवा वैज्ञानिकों को प्रशिक्षित करने और फॉरेंसिक विज्ञान के प्रति जागरूकता बढ़ाने में भी सक्रिय भूमिका निभाते हैं। उनके मार्गदर्शन में कई शोध और तकनीकी सुधार लागू हुए हैं, जिससे जांच की गुणवत्ता में निरंतर सुधार हुआ है।

डॉ. राजेश सिंह को उनके उत्कृष्ट कार्यों के लिए विभिन्न स्तरों पर सम्मानित भी किया गया है। राजस्थान पुलिस द्वारा प्रदान किया गया डी.जी.पी. कमेंडेशन रोल उनके योगदान का प्रमाण है, जो यह दर्शाता है कि उनका कार्य केवल प्रयोगशाला तक सीमित नहीं, बल्कि समाज और न्याय व्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। आज के समय में जब अपराध के तरीके अधिक जटिल होते जा रहे हैं, ऐसे में डॉ. राजेश सिंह जैसे वैज्ञानिकों की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। वे विज्ञान और न्याय के बीच एक मजबूत सेतु के रूप में कार्य कर रहे हैं, जिससे न केवल अपराधियों को सजा मिलती है, बल्कि निर्दोषों को न्याय भी सुनिश्चित होता है।

डॉ. राजेश सिंह का यह योगदान हमें यह सिखाता है कि साइंस समाज में न्याय, सुरक्षा और विश्वास की स्थापना का एक सशक्त माध्यम है। डॉ. राजेश सिंह, राजस्थान राज्य FSL, जयपुर में अतिरिक्त निदेशक के रूप में फॉरेंसिक विज्ञान और न्याय व्यवस्था के बीच एक अभेद्य सेतु हैं। DNA विश्लेषण और अपराध स्थल की वैज्ञानिक जांच में उनकी विशेषज्ञता ने हजारों जटिल मामलों को सुलझाने में निर्णायक भूमिका निभाई है।

उनके नेतृत्व में जयपुर FSL में अत्याधुनिक DNA प्रोफाइलिंग और साइबर फॉरेंसिक यूनिट को विश्व स्तरीय मानकों के अनुरूप अपग्रेड किया गया है। साथ ही, उन्होंने 'स्मार्ट लैब मैनेजमेंट सिस्टम' जैसे नवाचार लागू किए, जिससे गंभीर अपराधों की रिपोर्ट अब रिकॉर्ड समय में तैयार होती है। विष विज्ञान (Toxicology) और सीरोलॉजी के क्षेत्र में उनके अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रकाशित शोध पत्र आज नए मानक स्थापित कर रहे हैं।

अनुशासन और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के धनी डॉ. सिंह को राजस्थान पुलिस के 'डी.जी.पी. कमेंडेशन रोल' और 'एक्सीलेंस इन फॉरेंसिक साइंस' जैसे सम्मानों से नवाजा गया है। उनका यह योगदान सिद्ध करता है कि विज्ञान के सटीक प्रयोग से न केवल अपराधियों को सजा मिलती है, बल्कि निर्दोषों का न्याय भी सुनिश्चित होता है।

आहार–2026: जहां हुआ विज्ञान की शुद्धता और स्वाद की टेक्नॉलॉजी का मिलन

भारत के खाद्य एवं आतिथ्य (Food & Hospitality) क्षेत्र का महाकुंभ, 'आहार–2026', इस बार केवल एक व्यापारिक मेला बनकर नहीं रहा, बल्कि यह विज्ञान और तकनीकी की एक आधुनिक प्रयोगशाला के रूप में उभरा। नई दिल्ली के भव्य भारत मंडपम में 10 से 14 मार्च 2026 तक आयोजित इस अंतरराष्ट्रीय मेले ने यह साबित कर दिया कि भविष्य का भोजन केवल चूल्हे पर नहीं, बल्कि उन्नत प्रयोगशालाओं और स्मार्ट इंजीनियरिंग के बीच तैयार होगा। 1.5 लाख से अधिक आगंतुकों की उपस्थिति ने इस क्षेत्र में बढ़ती वैज्ञानिक रुचि पर मुहर लगा दी है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो आधुनिक खाद्य उद्योग अब पारंपरिक उत्पादन से आगे बढ़कर "फूड साइंस" और "फूड टेक्नोलॉजी" पर आधारित हो चुका है। आहार–2026 ने प्रमाणित किया है कि 'फूड प्रोसेसिंग' अब उच्च–स्तरीय शोध का विषय है। मेले में प्रदर्शित एंजाइम आधारित संरक्षण तकनीकी इस दिशा में एक क्रांतिकारी कदम है, जो बिना रसायनों के भोजन की ताजगी बनाए रखने में सक्षम है। इसके साथ ही, वैक्यूम और मॉडिफाइड एटमॉस्फियर पैकेजिंग (MAP) के प्रदर्शन ने दिखाया कि कैसे गैसों के वैज्ञानिक संतुलन से खाद्य पदार्थों की 'शेल्फ–लाइफ' को कई गुना बढ़ाया जा सकता है।

इस आयोजन में 17 देशों के 1800 से अधिक प्रदर्शकों ने भाग लिया, जहाँ रसायन विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी और इंजीनियरिंग का संयुक्त उपयोग देखने को मिला। विशेष रूप से स्मार्ट कोल्ड–चेन सिस्टम और IoT आधारित लॉजिस्टिक्स पर ध्यान केंद्रित किया गया, जो खेत से उपभोक्ता तक पहुँचने के दौरान भोजन के पोषक तत्वों को स्थिर रखते हैं। आयोजन के दौरान हुए 'फूड–टेक समिट' में भारत और यूरोपीय देशों के बीच 'ग्रीन फूड प्रोसेसिंग टेक्नोलॉजी' को लेकर महत्वपूर्ण रणनीतिक समझौते हुए, जिनका उद्देश्य भारतीय एमएसएमई क्षेत्र में शून्य–अपशिष्ट (Zero & Waste) उत्पादन तकनीकों को बढ़ावा देना है।

मेले के दौरान आयोजित विशेष सत्रों में 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस इन फूड सेफ्टी' पर चर्चा हुई, जहाँ ऐसे सेंसर आधारित टूल्स प्रदर्शित किए गए जो वास्तविक समय में भोजन की शुद्धता की जांच कर सकते हैं। युवा स्टार्टअप्स द्वारा प्रस्तुत स्मार्ट फूड उत्पाद और डिजिटल सप्लाई समाधान यह बताते हैं कि भविष्य का खाद्य उद्योग पूरी तरह से डेटा–ड्रिवन और सस्टेनेबल होगा।

अंततः, आहार–2026 यह संकेत देता है कि भारत का खाद्य उद्योग केवल उत्पादन तक सीमित नहीं, बल्कि वैज्ञानिक नवाचार और वैश्विक व्यापार की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है। यह आयोजन एक सशक्त उदाहरण है कि जब विज्ञान और उद्योग साथ आते हैं, तो न केवल अर्थव्यवस्था मजबूत होती है, बल्कि समाज को सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण भोजन भी प्राप्त होता है।

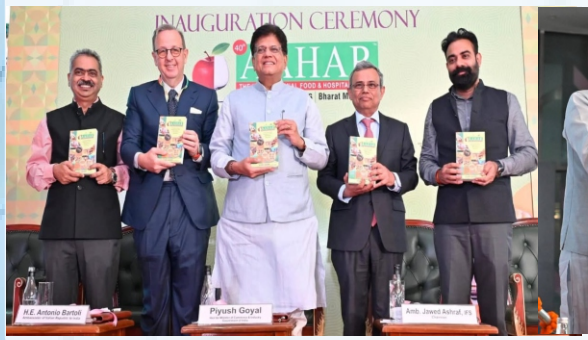

उत्तराखंड में विज्ञान का उभरता केंद्रः CRIS DNA Labs की कहानी

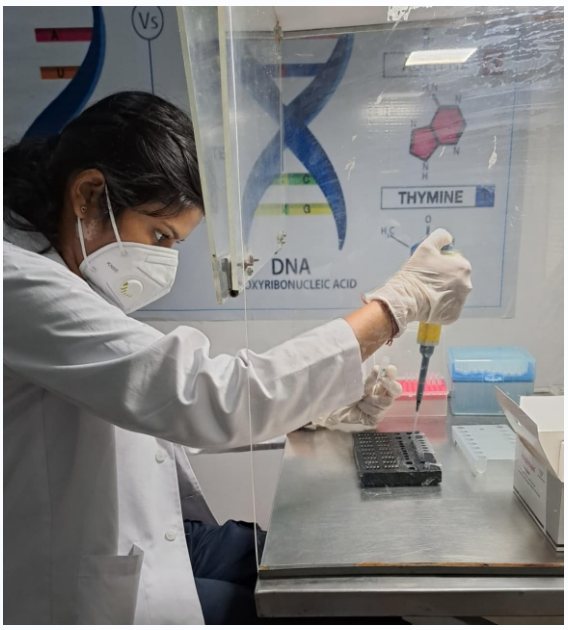

उत्तराखंड की शांतवादियों के बीच स्थित Centre for Research & Innovative Scientific Studies (CRIS) – DNA Labs केवल एक प्रयोगशाला नहीं, बल्कि विज्ञान, शोध और नवाचार का एक जीवंत केंद्र बन चुका है। यहाँ विज्ञान किताबों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि माइक्रोस्कोप, डीएनए अनुक्रमण, और रीयल–टाइम प्रयोगों के माध्यम से जीवंत अनुभव में बदल जाता है।

इस संस्थान के प्रबंध निदेशक एवं वैज्ञानिक 'नरोत्तम शर्मा' के नेतृत्व में CRIS & DNA Labs ने शोध और प्रशिक्षण के क्षेत्र में एक मजबूत पहचान बनाई है। उनका दृष्टिकोण स्पष्ट है–"विज्ञान को प्रयोगशाला से निकालकर समाज तक पहुँचाना"। यही कारण है कि यहाँ केवल सिद्धांत नहीं, बल्कि वास्तविक जीवन से जुड़े प्रोजेक्ट्स पर काम कराया जाता है।

यहाँ उपलब्ध अत्याधुनिक तकनीकें–जैसे रियल–टाइम PCR, ELISA, माइक्रोबायोलॉजिकल एनालिसिस–छात्रों को आधुनिक जैव–प्रौद्योगिकी की गहराई से समझ प्रदान करती हैं। आज जब जीनोमिक्स, कैंसर रिसर्च, माइक्रोबियल जेनेटिक्स और नैनोटेक्नोलॉजी जैसे क्षेत्र तेजी से विकसित हो रहे हैं, तब CRIS & DNA Labs छात्रों को इन उभरते क्षेत्रों में व्यावहारिक दक्षता देता है।

संस्थान की एक बड़ी विशेषता इसका हैंड्स–ऑन लर्निंग मॉडल है। यहाँ छात्र केवल प्रयोग देखते नहीं, बल्कि स्वयं करते हैं–सेल कल्चर से लेकर ड्रग रेजिस्टेंस के अध्ययन तक। यही अनुभव उन्हें पारंपरिक शिक्षा से अलग और उद्योग के लिए तैयार बनाता है।

CRIS & DNA Labs की विश्वसनीयता भी इसकी ताकत है। NABL मान्यता, ICMR अनुमोदन, ISO प्रमाणन और विभिन्न वैज्ञानिक संस्थाओं से जुड़ाव इसे एक प्रतिष्ठित संस्थान बनाते हैं। 4000 से अधिक छात्रों को प्रशिक्षण देना और 150+ शोध प्रकाशनों में योगदान इसकी वैज्ञानिक सक्रियता को दर्शाता है।

संस्थान केवल शिक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज के प्रति भी अपनी जिम्मेदारी निभाता है। स्वास्थ्य सेवाओं, डायग्नोस्टिक्स और सामुदायिक जागरूकता के माध्यम से यह विज्ञान को सीधे जनहित से जोड़ता है।

हाल ही में आयोजित "Applied Genomics, Molecular Diagnostics & Translational Research" पर आधारित राष्ट्रीय कार्यशाला और FDP कार्यक्रम इस बात का प्रमाण है कि CRIS & DNA Labs केवल सीखने का स्थान नहीं, बल्कि विचारों के आदान–प्रदान और वैज्ञानिक संवाद का मंच भी है।

वर्तमान समय में, जब विज्ञान और तकनीकी मानव जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित कर रहे हैं, ऐसे संस्थान भविष्य के वैज्ञानिकों को तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। CRIS & DNA Labs न केवल ज्ञान देता है, बल्कि जिज्ञासा, नवाचार और समाज सेवा की भावना भी विकसित करता है।

यह कहना गलत नहीं होगा कि यह संस्थान "डीएनए की संरचना से लेकर समाज की संरचना तक" परिवर्तन लाने की दिशा में कार्य कर रहा है–जहाँ प्रयोगशाला की खोजें, मानव जीवन को बेहतर बनाने का माध्यम बनती हैं।

प्लांटिका संस्थानः विज्ञान, कौशल और आत्मनिर्भर कृषि की नई दिशा

देहरादून स्थित प्लांटिका – इंडियन एकेडमी ऑफ रूरल डेवलपमेंट (IARD) आज उत्तराखंड में कृषि शिक्षा, प्रशिक्षण और अनुसंधान का एक उभरता हुआ केंद्र बन चुका है। यह संस्थान पारंपरिक खेती को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जोड़ते हुए युवाओं, छात्रों और किसानों को व्यावहारिक ज्ञान प्रदान कर रहा है। यहाँ शिक्षा का स्वरूप केवल सैद्धांतिक नहीं, बल्कि प्रयोगशाला आधारित और वास्तविक परिस्थितियों से जुड़ा हुआ है, जो इसे अन्य संस्थानों से अलग पहचान देता है।

इस संस्थान की स्थापना के पीछे डॉ. अनूप बडोनी की दूरदर्शी सोच और वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। उन्होंने यह समझा कि यदि कृषि को वास्तव में सशक्त बनाना है, तो उसे विज्ञान और तकनीकी के साथ जोड़ना आवश्यक है। इसी उद्देश्य से उन्होंने एक ऐसा मंच तैयार किया, जहाँ विद्यार्थी और किसान दोनों आधुनिक कृषि तकनीकों को सीख सकें और उन्हें सीधे खेतों में लागू कर सकें। उनका प्रयास केवल प्रशिक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि ग्रामीण युवाओं को आत्मनिर्भर बनाने और कृषि को एक सम्मानजनक पेशे के रूप में स्थापित करने की दिशा में भी है।

प्लांटिका में प्रशिक्षण का मुख्य आधार "करते हुए सीखना" है। यहाँ मिट्टी, पौधा, पानी और बीज के वैज्ञानिक परीक्षण पर विशेष जोर दिया जाता है। छात्र प्रयोगशालाओं में स्वयं मृदा का pH, विद्युत चालकता, पोषक तत्वों की मात्रा, तथा कार्बन स्तर का विश्लेषण करते हैं। इसी प्रकार पौधों में पोषक तत्वों की कमी का अध्ययन, सिंचाई जल की गुणवत्ता का परीक्षण और बीज की अंकुरण क्षमता व शुद्धता की जांच कराई जाती है। यह संपूर्ण प्रक्रिया विद्यार्थियों को कृषि को एक डेटा–आधारित विज्ञान के रूप में समझने में मदद करती है। इस प्रकार का समग्र प्रशिक्षण विद्यार्थियों में केवल तकनीकी कौशल ही नहीं, बल्कि विश्लेषणात्मक सोच और समस्या समाधान की क्षमता भी विकसित करता है। वे यह सीखते हैं कि किस प्रकार वैज्ञानिक परीक्षणों के आधार पर सही फसल का चयन किया जाए, उर्वरकों का संतुलित उपयोग हो और संसाधनों का संरक्षण किया जा सके। यही दृष्टिकोण भविष्य की टिकाऊ कृषि की नींव है।

संस्थान में मशरूम उत्पादन, जैविक खेती और कृषि–आधारित उद्यमिता जैसे कार्यक्रम भी संचालित किए जाते हैं, जो युवाओं को रोजगार और स्वरोजगार के नए अवसर प्रदान करते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्लांटिका केवल एक प्रशिक्षण केंद्र नहीं, बल्कि ग्रामीण विकास और आत्मनिर्भरता का एक सशक्त माध्यम भी है।

आज जब जलवायु परिवर्तन, मिट्टी की उर्वरता में गिरावट और जल संकट जैसी चुनौतियाँ सामने हैं, तब प्लांटिका जैसे संस्थान वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत कर रहे हैं। यहाँ दिया जाने वाला प्रशिक्षण पर्यावरण संरक्षण और उत्पादन वृद्धि के बीच संतुलन स्थापित करने पर केंद्रित है। वास्तव में, प्लांटिका देहरादून एक ऐसा उदाहरण है, जहाँ विज्ञान, शिक्षा और समाज एक साथ आगे बढ़ते दिखाई देते हैं। डॉ. अनूप बडोनी के नेतृत्व में यह संस्थान न केवल ज्ञान का प्रसार कर रहा है, बल्कि एक नई सोच को जन्म दे रहा है–जहाँ खेती केवल आजीविका नहीं, बल्कि विज्ञान और नवाचार का क्षेत्र बनकर उभर रही है।

डॉ. बृजमोहन शर्मा: जब विज्ञान रसोई तक पहुँचता है।

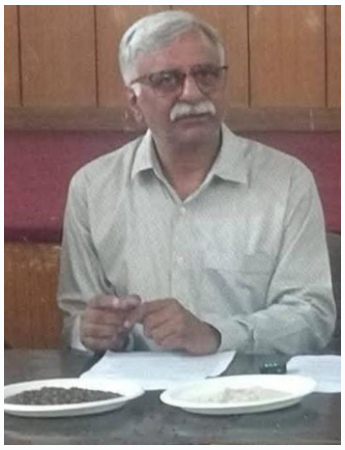

हम रोज़ जो भोजन करते हैं, वह केवल स्वाद या भूख का विषय नहीं है—यह हमारे शरीर की कोशिकाओं, हार्मोन्स और प्रतिरक्षा तंत्र को सीधे प्रभावित करता है। लेकिन जब यही भोजन मिलावट का शिकार हो जाए, तो यह धीरे—धीरे शरीर के लिए "धीमा ज़हर" बन सकता है। यहीं से डॉ. बृजमोहन शर्मा का कार्य एक वैज्ञानिक आंदोलन का रूप ले लेता है।

डॉ. शर्मा का दृष्टिकोण स्पष्ट है—खाद्य सुरक्षा केवल प्रयोगशालाओं की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि हर घर की प्राथमिक वैज्ञानिक जिम्मेदारी है। वे विज्ञान को जटिल सूत्रों से निकालकर व्यवहारिक प्रयोगों में बदल देते हैं। उदाहरण के लिए, वे बताते हैं कि दूध की एक बूंद पानी में डालकर उसका फैलाव देखना केवल एक साधारण क्रिया नहीं, बल्कि "घनत्व (Density)" और "सतही तनाव (Surface Tension)" का प्रत्यक्ष परीक्षण है। शुद्ध दूध धीरे—धीरे फैलता है, जबकि मिलावटी दूध तेजी से फैलकर अपनी संरचना की कमजोरी को उजागर कर देता है।इसी तरह हल्दी की जांच एक छोटा—सा "रासायनिक परीक्षण" है। शुद्ध हल्दी पानी में तुरंत नहीं घुलती, जबकि मिलावटी हल्दी (जिसमें सिंथेटिक रंग हो सकते हैं) पानी को तुरंत गहरा रंग दे देती है। यह रंगों की घुलनशीलता (Solubility) और कृत्रिम रसायनों की उपस्थिति का संकेत है।

चीनी में मिलावट की पहचान करते समय वे बताते हैं कि यदि उसमें चूना (calcium compounds) मिला हो, तो वह पानी में घुलने के बाद तलछट छोड़ सकता है। इसी तरह चाय की पत्तियों में कृत्रिम रंग मिलाने पर वे तुरंत गहरा रंग छोड़ती हैं—यह "डाई लीचिंग" (Dye Leaching) की प्रक्रिया है।

डॉ. शर्मा इन उदाहरणों के माध्यम से यह समझाते हैं कि हर व्यक्ति अपने घर में एक छोटा वैज्ञानिक बन सकता है। उनके शिविरों में लोग केवल सुनते नहीं, बल्कि खुद प्रयोग करते हैंकृयही "अनुभव आधारित शिक्षा" (Experiential Learning) है, जो जागरूकता को स्थायी बनाती है। उनका एक महत्वपूर्ण योगदान जल परीक्षण अभियानों में भी है। वे बताते हैं कि पानी की गुणवत्ता केवल पारदर्शिता से नहीं, बल्कि ज्कै ;ज्वजंस क्पेवसअमक ेवसपकेद्धए चभ् और सूक्ष्म जीवों की उपस्थिति से निर्धारित होती है। साधारण किट के माध्यम से भी इनका आकलन किया जा सकता है, जिससे जलजनित रोगों को रोका जा सकता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो मिलावट केवल आर्थिक धोखाधड़ी नहीं, बल्कि "पब्लिक हेल्थ रिस्क" है। मिलावटी तेल में ऑक्सीकरण (Oxidation) बढ़ सकता है, जिससे हानिकारक फ्री रेडिकल्स बनते हैं। कृत्रिम रंग और रसायन लंबे समय में कैंसर, हार्मोनल असंतुलन और अंगों की क्षति का कारण बन सकते हैं।

डॉ. बृजमोहन शर्मा का सबसे बड़ा संदेश यही है कि विज्ञान को केवल पढ़ा नहीं, जिया जाना चाहिए। जब हम खरीदारी करते समय गुणवत्ता चिन्ह (FSSAI, ISI, AGMARK) देखते हैं, बिल लेते हैं और छोटे—छोटे परीक्षण अपनाते हैं, तब हम केवल उपभोक्ता नहीं रहते—हम "वैज्ञानिक नागरिक" बन जाते हैं। आज के समय में, जब बाजार में प्रतिस्पर्धा के साथ मिलावट भी बढ़ रही है, डॉ. शर्मा जैसे वैज्ञानिक हमें यह सिखाते हैं कि जागरूकता ही सबसे प्रभावी तकनीकी है। विज्ञान कोई दूर की चीज़ नहीं—वह हमारी रसोई, हमारे पानी और हमारी रोज़मर्रा की आदतों में छिपा हुआ है।

थाली में छुपा सचः मिलावट की पहचान का विज्ञान

माना कि–आपकी थाली में सजी रंग–बिरंगी दाल, मसालेदार सब्जी और मीठा शहद... लेकिन क्या यह सब उतना ही शुद्ध है जितना दिखता है? आज का सबसे बड़ा सवाल यही है, क्योंकि स्वाद के पीछे अक्सर एक छुपा हुआ खतरा होता है–'मिलावट'।

मिलावट कोई नई समस्या नहीं, लेकिन आज यह विज्ञान की चुनौती बन चुकी है। जब सस्ते पदार्थों को मिलाकर खाद्य पदार्थों की मात्रा बढ़ाई जाती है, तो वह सिर्फ जेब पर नहीं, शरीर पर भी भारी पड़ता है। लेकिन अच्छी बात यह है कि विज्ञान ने हमें ऐसे सरल तरीके दिए हैं, जिनसे हम घर बैठे ही "खाने की सच्चाई" जान सकते हैं। जैसे ही आप चीनी या नमक को पानी में घोलते हैं, शुद्धता खुद सामने आ जाती है। अगर नीचे रेत या चाक बैठ जाए, तो समझिए मामला साफ है। यह कोई जादू नहीं, बल्कि घुलनशीलता (Solubility) का सरल विज्ञान है। कॉफी की खुशबू में भी सच छुपा हो सकता है।

असली कॉफी पानी पर तैरती है, जबकि चिकोरी नीचे बैठकर रंग की लकीर छोड़ती है–मानो खुद बता रही हो, "मैं मिलावट हूं!" और शहद३ जिसे हम स्वास्थ्य का प्रतीक मानते हैं।

अगर शहद में डूबी बाती आसानी से जल जाए, तो वह शुद्ध है। लेकिन अगर वह सुलगती रहे या चटखने की आवाज करे, तो समझिए उसमें पानी या चीनी की मिलावट है। यह प्रयोग जितना सरल है, उतना ही चौंकाने वाला।

मसालों की दुनिया तो और भी रंगीन–और खतरनाक है। लाल मिर्च में ईंट का चूरा, हल्दी में मेटानिल येलो जैसे रसायन३ लेकिन पानी में डालते ही यह "नकली रंग" अपनी पहचान खोल देते हैं। हल्दी में अम्ल डालते ही बैंगनी रंग उभरना, एक तरह से विज्ञान की चेतावनी है–"सावधान!"

दूध, पनीर और खोया जैसे रोज़मर्रा के खाद्य पदार्थ भी इससे अछूते नहीं हैं। आयोडीन की कुछ बूंदें डालते ही अगर नीला रंग उभर आए, तो यह स्टार्च की मिलावट का संकेत है। यानी जो हम पोषण समझ रहे थे, वह सिर्फ भ्रम भी हो सकता है। दरअसल, ये सभी परीक्षण विज्ञान के मूल सिद्धांतों–रासायनिक अभिक्रिया, घनत्व, रंग परिवर्तन और घुलनशीलता–पर आधारित हैं। यही वजह है कि बिना किसी बड़ी प्रयोगशाला के भी हम "छोटे वैज्ञानिक" बनकर अपनी थाली की जांच कर सकते हैं।

अंत में, सवाल सिर्फ मिलावट का नहीं, बल्कि जागरूकता का है। जब उपभोक्ता जागरूक होगा, तभी बाजार सुधरेगा। इसलिए अगली बार जब आप कुछ खाएं, तो सिर्फ स्वाद पर नहीं–'सत्य पर भरोसा करें'।

क्योंकि विज्ञान हमें यही सिखाता है–

'जो दिखता है, वह हमेशा सच नहीं होता३ लेकिन जो परखा जाता है, वही सच होता है।'

घर बैठे विज्ञानः खाद्य पदार्थों में मिलावट की पहचान का सरल विज्ञान

FSSAI द्वारा विकसित DART (Detect Adulteration with Rapid Test) पहल आम लोगों को यह सिखाती है कि हम अपने दैनिक जीवन में उपयोग होने वाले खाद्य पदार्थों की शुद्धता को सरल वैज्ञानिक तरीकों से स्वयं भी परख सकते हैं। आज के समय में खाद्य मिलावट केवल आर्थिक धोखाधड़ी नहीं, बल्कि एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या बन चुकी है। ऐसे में विज्ञान आधारित जागरूकता ही हमारी पहली सुरक्षा है।

दूध, जो हमारे आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, उसमें पानी, डिटर्जेंट और स्टार्च जैसी मिलावट आम पाई जाती है। लेकिन एक साधारण परीक्षण से इसकी पहचान की जा सकती है। यदि दूध की एक बूंद चिकनी सतह पर डालने पर धीरे–धीरे सफेद निशान बनाते हुए नीचे आती है, तो यह उसकी शुद्धता का संकेत है। वहीं यदि वह तेजी से बिना निशान के बह जाए, तो उसमें पानी मिला हो सकता है। इसी प्रकार दूध में आयोडीन डालने पर नीला रंग आना स्टार्च की मिलावट को दर्शाता है। यह एक सरल रासायनिक प्रतिक्रिया है, जो विज्ञान की बुनियादी समझ को हमारे दैनिक जीवन से जोड़ती है।

मसालों में भी मिलावट एक आम समस्या है। हल्दी में मेटानिल येलो जैसे कृत्रिम रंग मिलाए जाते हैं, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। पानी में हल्दी डालने पर यदि रंग असामान्य रूप से गहरा नारंगी हो जाए, तो यह मिलावट का संकेत हो सकता है। इसी तरह काली मिर्च में पपीते के बीज मिलाकर धोखा दिया जाता है। पानी में डालने पर असली काली मिर्च नीचे बैठ जाती है, जबकि हल्के पपीते के बीज ऊपर तैरते हैं। यह परीक्षण घनत्व (density) के सिद्धांत पर आधारित है।

शहद की शुद्धता की जांच भी एक रोचक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। रुई की बत्ती को शहद में डुबोकर जलाने पर यदि वह बिना रुकावट के जलती है, तो यह शुद्धता का संकेत है। वहीं पानी की मिलावट होने पर जलने के दौरान चटकने की आवाज आती है। इसी प्रकार कॉफी में मिलाई जाने वाली चिकोरी को पानी में डालकर आसानी से पहचाना जा सकता है, क्योंकि चिकोरी भारी होने के कारण नीचे बैठ जाती है जबकि शुद्ध कॉफी ऊपर तैरती रहती है।

इन सभी परीक्षणों का आधार सरल वैज्ञानिक सिद्धांत हैं–जैसे घनत्व, घुलनशीलता, और रासायनिक अभिक्रियाएं। यही कारण है कि ये परीक्षण न केवल मिलावट की पहचान करते हैं, बल्कि आम लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी विकसित करते हैं। हालांकि यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ये परीक्षण प्रारंभिक स्तर के होते हैं और किसी गंभीर या संदिग्ध स्थिति में प्रयोगशाला परीक्षण ही अंतिम प्रमाण प्रदान करता है।

खाद्य सुरक्षा केवल सरकार या संस्थाओं की जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि यह हर नागरिक की साझा जिम्मेदारी है। जब हम विज्ञान को अपने दैनिक जीवन में अपनाते हैं, तो न केवल हम अपने स्वास्थ्य की रक्षा करते हैं, बल्कि एक जागरूक और सशक्त समाज के निर्माण में भी योगदान देते हैं।

फ्योंली और जैव–विविधताः बसंत का वैज्ञानिक संदेश

देवभूमि उत्तराखण्ड में बसंत ऋतु का आगमन केवल मौसम का परिवर्तन नहीं, बल्कि जैव–विविधता (Biodiversity) के पुनर्जागरण का संकेत है। जब पहाड़ फ्योंली या फ्यौलिड़ी (Reinwardtia indica) के पीले फूलों से ढक जाते हैं, तो यह दृश्य प्रकृति की उस अदृश्य प्रक्रिया को दर्शाता है, जिसमें जीवन की विविधता एक बार फिर सक्रिय हो उठती है। यह छोटा–सा जंगली फूल पहाड़ी पारिस्थितिकी तंत्र में एक महत्वपूर्ण "जैविक कड़ी" (biological link) का कार्य करता है।

फ्योंली का सबसे बड़ा योगदान परागण (pollination) की प्रक्रिया में है, जो जैव–विविधता की नींव है। मधुमक्खियाँ, तितलियाँ और अन्य परागणकर्ता इन फूलों से मधुरस ग्रहण करते हुए परागकणों का एक पौधे से दूसरे पौधे तक स्थानांतरण करते हैं। यह प्रक्रिया पौधों में 'आनुवंशिक विविधता (genetic diversity)' को बढ़ाती है, जिससे नई और अधिक अनुकूल प्रजातियाँ विकसित होती हैं। यही विविधता किसी भी पारिस्थितिकी तंत्र को स्थिर और लचीला (resilient) बनाती है।

फ्योंली जैसे फूल "खाद्य जाल" (Food Web) की शुरुआत में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनके द्वारा उत्पन्न बीज और फल छोटे जीवों, पक्षियों और कीटों के लिए भोजन बनते हैं। बदले में ये जीव बड़े जीवों के लिए ऊर्जा का स्रोत बनते हैं। इस प्रकार एक छोटा–सा फूल पूरे खाद्य जाल/श्रृंखला (food chain/web) को ऊर्जा प्रदान करता है और पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित बनाए रखता है।

इसके अलावा, फ्योंली एक 'इकोलॉजिकल इंडिकेटर (Ecological Indicator)' भी है। किसी क्षेत्र में इन फूलों की प्रचुरता यह दर्शाती है कि वहाँ की मिट्टी, जलवायु और जैविक गतिविधियाँ संतुलित हैं। यदि इनकी संख्या घटती है, तो यह संकेत हो सकता है कि उस क्षेत्र की जैव–विविधता पर दबाव बढ़ रहा है–जैसे जलवायु परिवर्तन, भूमि उपयोग में बदलाव या प्रदूषण।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से, फ्योंली जैसे जंगली फूल "कीस्टोन स्पीशीज़" (keystone species) की तरह कार्य कर सकते हैं–यानी इनकी उपस्थिति कई अन्य जीवों के अस्तित्व को प्रभावित करती है। यदि ऐसे फूल कम हो जाएँ, तो परागणकर्ता घटेंगे, जिससे पौधों की विविधता कम होगी और अंततः पूरा पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित होगा।

इस प्रकार, फ्योंली केवल एक सुंदर बसंती फूल नहीं, बल्कि जैव–विविधता का एक जीवंत आधार है। यह हमें यह समझाता है कि प्रकृति में छोटे–छोटे जीव और पौधे भी जीवन के बड़े ताने–बाने को संभाले हुए हैं। जब हम फ्योंली को खिलते हुए देखते हैं, तो दरअसल हम जैव–विविधता के पुनर्जीवन और प्रकृति के संतुलन को अपनी आँखों से देख रहे होते हैं।

मधुमक्खियाँः जैव–विविधता की अदृश्य इंजीनियर

जब एक छोटी–सी मधुमक्खी किसी फूल पर बैठती है, तो वह केवल अपना भोजन नहीं जुटा रही होती, बल्कि वह पृथ्वी के जीवन चक्र को आगे बढ़ाने का काम कर रही होती है। यह दृश्य जितना साधारण लगता है, उसके पीछे उतना ही गहरा वैज्ञानिक रहस्य छिपा है। मधुमक्खियाँ प्रकृति की उस अदृश्य शक्ति का हिस्सा हैं, जो हमारी थाली, हमारे जंगल और हमारे भविष्यकृतीनों को जोड़ती है।

प्रकृति में जीवन का सबसे सुंदर नियम हैकृपरस्पर निर्भरता। मधुमक्खियाँ इस नियम की जीवंत मिसाल हैं। जब वे फूलों से अमृत और पराग इकट्ठा करती हैं, तो अनजाने में एक पौधे के पराग को दूसरे तक पहुंचा देती हैं। यही प्रक्रिया परागण कहलाती है, और यही बीज, फल और नई पीढ़ियों के जन्म का आधार है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि दुनिया की अधिकांश फूलदार फसलें किसी न किसी रूप में परागणकर्ताओं पर निर्भर हैं, और इनमें मधुमक्खियाँ सबसे प्रमुख भूमिका निभाती हैं।

यदि हम अपनी रोज़मर्रा की थाली को ध्यान से देखें–सेब, बादाम, सब्जियाँ, मसाले, यहाँ तक कि कॉफीकृतो इनमें से कई चीजें सीधे मधुमक्खियों के श्रम से जुड़ी हुई हैं। वे हमारे भोजन को केवल मात्रा में नहीं, बल्कि विविधता में भी समृद्ध बनाती हैं। बिना मधुमक्खियों के भोजन शायद मिल तो जाए, लेकिन वह नीरस, सीमित और पोषण के लिहाज़ से कमज़ोर हो सकता है।

लेकिन मधुमक्खियों का महत्व केवल खेतों तक सीमित नहीं है। जंगलों और प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों में भी वे उतनी ही महत्वपूर्ण हैं। वे पौधों की नई पीढ़ी को जन्म देती हैं, जिससे घास, झाड़ियाँ और पेड़ उगते हैं। यही पौधे आगे चलकर पक्षियों, कीटों और अन्य जीवों के लिए भोजन और आश्रय बनते हैं। इस तरह एक छोटी–सी मधुमक्खी पूरे खाद्य जाल (food web) को संतुलित रखने में मदद करती है। अगर यह कड़ी कमजोर पड़ जाए, तो पूरा पारिस्थितिक तंत्र डगमगा सकता है।

वैज्ञानिक दृष्टि से मधुमक्खियाँ "कीस्टोन प्रजाति" की तरह काम करती हैं–यानी ऐसी प्रजाति, जिसके बिना पूरी व्यवस्था असंतुलित हो सकती है। वे पौधों में आनुवंशिक विविधता बढ़ाती हैं, जिससे प्रकृति बदलते मौसम और जलवायु के प्रति अधिक मजबूत बनती है। इस तरह मधुमक्खियाँ केवल वर्तमान को नहीं, बल्कि भविष्य को भी सुरक्षित करती हैं।

दिलचस्प बात यह है कि मधुमक्खियाँ केवल प्रकृति की सेवक नहीं, बल्कि मनुष्य की साथी भी हैं। हजारों वर्षों से मनुष्य मधुमक्खियों के साथ जुड़ा रहा है। शहद, मोम, रॉयल जेली और प्रोपोलिस जैसे उत्पाद न केवल पोषण और औषधि के रूप में उपयोग होते हैं, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार भी बनते हैं। एक छोटा–सा छत्ता कई परिवारों की आजीविका को सहारा दे सकता है।

लेकिन आज यह संतुलन खतरे में है। आधुनिक कृषि में रासायनिक कीटनाशकों का बढ़ता उपयोग, जंगलों का नष्ट होना, जलवायु परिवर्तन और वायु प्रदूषणकृये सभी कारक मधुमक्खियों की संख्या को तेजी से घटा रहे हैं। वैज्ञानिकों ने यह भी पाया है कि वायु प्रदूषण फूलों की खुशबू को बदल देता है, जिससे मधुमक्खियाँ अपने भोजन का रास्ता पहचान नहीं पातीं। यह समस्या जितनी सूक्ष्म है, उतनी ही गंभीर भी।

कल्पना कीजिए, यदि मधुमक्खियाँ धीरे–धीरे गायब होने लगें–तो सबसे पहले हमारे खेत प्रभावित होंगे, फिर जंगल, और अंततः हमारा जीवन। भोजन की विविधता घटेगी, कई पौधे विलुप्त हो सकते हैं और पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ जाएगा। यह केवल एक कीट के खोने की कहानी नहीं होगी, बल्कि पूरे जीवन तंत्र के कमजोर पड़ने की शुरुआत होगी।

फिर भी उम्मीद की किरण मौजूद है। यदि हम अपने आसपास फूलदार पौधे लगाएँ, कीटनाशकों का सोच–समझकर उपयोग करें, स्थानीय मधुमक्खी पालकों का समर्थन करें और लोगों में जागरूकता फैलाएँ–तो हम इस संकट को काफी हद तक कम कर सकते हैं। छोटे–छोटे कदम मिलकर बड़े बदलाव ला सकते हैं।

अंततः, मधुमक्खियाँ हमें एक गहरा संदेश देती हैं–प्रकृति में कोई भी जीव छोटा नहीं होता। हर एक का अपना महत्व है, और जब हम उस महत्व को समझते हैं, तभी हम अपने अस्तित्व को भी सुरक्षित रख पाते हैं। मधुमक्खियों की गूंज केवल एक आवाज़ नहीं, बल्कि पृथ्वी के संतुलन की धड़कन है।

मधुमक्खी पालन (Apiculture): विज्ञान, प्रबंधन और आय का व्यवहारिक मॉडल

मधुमक्खी पालन, जिसे एपीकल्चर कहा जाता है, आज केवल शहद उत्पादन तक सीमित गतिविधि नहीं रहा, बल्कि यह वैज्ञानिक प्रबंधन, कृषि विकास और अतिरिक्त आय का एक व्यवहारिक मॉडल बन चुका है। विशेष रूप से भारत जैसे कृषि प्रधान देश में यह किसानों के लिए कम लागत में अधिक लाभ देने वाला एक प्रभावी विकल्प है।

मधुमक्खी पालन की सफलता का आधार उसकी वैज्ञानिक समझ में छिपा होता है। एक कॉलोनी में रानी, श्रमिक और नर मधुमक्खियाँ एक सुव्यवस्थित सामाजिक ढाँचे में कार्य करती हैं। रानी प्रतिदिन हजारों अंडे दे सकती है, जिससे कॉलोनी की निरंतर वृद्धि होती है। श्रमिक मधुमक्खियाँ फूलों से मधुरस और पराग एकत्र करती हैं, छत्ते का निर्माण करती हैं और लार्वा की देखभाल करती हैं। यह "कार्य विभाजन" उत्पादन को अधिक कुशल बनाता है। व्यवहारिक दृष्टि से मधुमक्खी पालन शुरू करने के लिए उपयुक्त स्थान का चयन सबसे महत्वपूर्ण होता है। ऐसे स्थान का चयन करना चाहिए जहाँ आसपास पर्याप्त फूलदार पौधे हों, पानी का स्रोत उपलब्ध हो और अत्यधिक प्रदूषण या कीटनाशकों का प्रभाव न हो। सरसों, लीची, सूरजमुखी, यूकेलिप्टस और पहाड़ी क्षेत्रों में बुरांश जैसे पौधे मधुमक्खियों के लिए अच्छे स्रोत होते हैं।

मधुमक्खी पालन में बॉक्स (हाइव) का सही प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। नियमित निरीक्षण के दौरान यह देखा जाता है कि रानी सक्रिय है या नहीं, अंडों और लार्वा की स्थिति कैसी है, और कहीं कोई रोग या परजीवी (जैसे वैरोआ माइट) तो नहीं है। निरीक्षण करते समय सुरक्षात्मक कपड़े, दस्ताने और स्मोकर (धुआँ देने वाला उपकरण) का प्रयोग किया जाता है, जिससे मधुमक्खियाँ शांत रहती हैं।

शहद निष्कर्षण (honey extraction) एक महत्वपूर्ण चरण है, जिसे वैज्ञानिक तरीके से करना जरूरी है। जब छत्ते के फ्रेम में शहद पूरी तरह पक जाता है, तब उसे सावधानीपूर्वक निकालकर मशीन (centrifuge) की सहायता से शहद अलग किया जाता है। इससे मधुमक्खियों को नुकसान नहीं होता और उत्पादन निरंतर बना रहता है। एपीकल्चर का सबसे बड़ा लाभ परागण में है। मधुमक्खियाँ फसलों में परागण करके उत्पादन को 20–30 प्रतिशत तक बढ़ा सकती हैं। इसलिए कई किसान फसलों के साथ मधुमक्खी पालन को जोड़कर दोहरा लाभ प्राप्त कर रहे हैं–एक ओर शहद और अन्य उत्पाद, दूसरी ओर बढ़ी हुई कृषि उपज। आर्थिक रूप से यह एक टिकाऊ और स्केलेबल व्यवसाय है। एक छोटे स्तर से शुरू करके इसे धीरे–धीरे बढ़ाया जा सकता है। शहद, मधुमोम, बी–पॉलन, रॉयल जेली और प्रोपोलिस जैसे उत्पाद बाजार में अच्छी कीमत पर बिकते हैं। साथ ही, सरकारी योजनाएँ और प्रशिक्षण संस्थान भी इस क्षेत्र को बढ़ावा दे रहे हैं। आज के पर्यावरणीय संदर्भ में मधुमक्खी पालन का महत्व और भी बढ़ जाता है। यह जैव विविधता को बनाए रखने, पौधों के जीवन चक्र को स्थिर रखने और पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अंततः, मधुमक्खी पालन एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ विज्ञान, प्रकृति और अर्थव्यवस्था एक साथ काम करते हैं। यदि इसे सही तकनीकी और समझ के साथ अपनाया जाए, तो यह न केवल आय का स्रोत बनता है, बल्कि सतत विकास की दिशा में एक मजबूत कदम भी साबित होता है।

हिमालय की गोद में बसी जैव–विविधता की अनमोल धरोहरः उत्तराखंड

उत्तराखंड, हिमालय की गोद में बसा एक ऐसा राज्य है जहाँ प्रकृति ने अपनी जैव–विविधता का अद्भुत खजाना संजोकर रखा है। यहाँ की पर्वतीय जलवायु, विविध भौगोलिक संरचना और ऊँचाई के अनुसार बदलते पारिस्थितिकी तंत्र इसे विश्व के महत्वपूर्ण जैव–विविधता हॉटस्पॉट्स में स्थान दिलाते हैं। घने वनों, हिमालयी घास के मैदानों (बुग्यालों), नदियों और घाटियों में फैली यह विविधता न केवल पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखती है, बल्कि मानव जीवन के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

उत्तराखंड में जैव–विविधता संरक्षण के लिए सुदृढ़ संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क विकसित किया गया है। जिम कॉर्बेट राष्ट्रीय उद्यान, जो एशिया का पहला राष्ट्रीय उद्यान है, तथा राजाजी राष्ट्रीय उद्यान जैसे क्षेत्र वन्यजीवों के सुरक्षित आवास प्रदान करते हैं। इसके साथ ही नंदा देवी बायोस्फीयर रिजर्व जैसे अंतरराष्ट्रीय महत्व के संरक्षित क्षेत्र हिमालयी पारिस्थितिकी की रक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राज्य में कुल 6 राष्ट्रीय उद्यान, 7 वन्यजीव अभयारण्य और अनेक कंजर्वेशन रिजर्व जैव विविधता संरक्षण के मजबूत स्तंभ हैं।

भारत सरकार द्वारा लागू 2002 के जैव विविधता अधिनियम के तहत उत्तराखंड जैव विविधता बोर्ड और स्थानीय स्तर पर गठित जैव विविधता प्रबंधन समितियाँ (BMCs) महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। ये समितियाँ स्थानीय समुदायों के सहयोग से जैव संसाधनों के संरक्षण, उनके सतत उपयोग और पारंपरिक ज्ञान के दस्तावेजीकरण का कार्य करती हैं। विशेष रूप से 'पीपुल्स बायोडायवर्सिटी रजिस्टर' (PBR) के माध्यम से स्थानीय जैव संपदा का वैज्ञानिक संकलन किया जा रहा है।

राज्य में 'प्रोजेक्ट टाइगर' और 'प्रोजेक्ट एलीफेंट' जैसी राष्ट्रीय योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन भी संरक्षण प्रयासों को सशक्त बनाता है। वहीं, पारंपरिक आस्थाओं से जुड़े 'पवित्र उपवन' (Sacred Groves) आज भी कई दुर्लभ पौधों और जीवों के संरक्षण में योगदान दे रहे हैं। उत्तराखंड में लगभग 3,700 से अधिक जीव प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें हिमालयी औषधीय पौधे, दुर्लभ पक्षी और स्थानिक जीव विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं।

हालांकि, इस समृद्ध जैव–विविधता के सामने कई चुनौतियाँ भी हैं। वनों की कटाई, अनियोजित विकास परियोजनाएँ, जलवायु परिवर्तन और मानव–वन्यजीव संघर्ष इसके लिए गंभीर खतरे बनते जा रहे हैं। विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में मानव और वन्यजीवों के बीच बढ़ता संघर्ष पारिस्थितिक संतुलन को प्रभावित कर रहा है।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए उत्तराखंड सरकार राज्य जैव विविधता कार्य योजना (SBSAP) के तहत विभिन्न संरक्षण रणनीतियों को लागू कर रही है। इसमें सामुदायिक भागीदारी, वैज्ञानिक अनुसंधान, पर्यावरण शिक्षा और सतत विकास के सिद्धांतों को प्राथमिकता दी जा रही है।

अंततः, उत्तराखंड की जैव–विविधता केवल प्राकृतिक धरोहर नहीं, बल्कि हमारे अस्तित्व की आधारशिला है। इसे संरक्षित करना केवल सरकार या वैज्ञानिकों की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि समाज के हर व्यक्ति का कर्तव्य है। जब विज्ञान, परंपरा और सामुदायिक सहभागिता एक साथ मिलते हैं, तभी प्रकृति के साथ संतुलित सह–अस्तित्व संभव हो पाता है।

जैव–विविधता और संरक्षणः पृथ्वी के जीवन तंत्र का वैज्ञानिक आधार

पृथ्वी एकमात्र ज्ञात ग्रह है जहाँ जीवन अपनी असंख्य रूपों में विकसित हुआ है। यह विविधता केवल जीवों की संख्या नहीं, बल्कि उनके बीच जटिल पारस्परिक संबंधों, अनुकूलनों और पारिस्थितिक संतुलन का परिणाम है। इसी व्यापक विविधता को हम "जैव–विविधता" कहते हैं। यह हमारे ग्रह के अस्तित्व, स्थिरता और मानव जीवन की निरंतरता का मूल आधार है।

वैज्ञानिक दृष्टि से जैव–विविधता का अर्थ है–जीवों में विभिन्न स्तरों पर पाई जाने वाली भिन्नता, जो जीन से लेकर सम्पूर्ण पारिस्थितिक तंत्र तक फैली होती है। यह विविधता तीन प्रमुख स्तरों पर समझी जाती है–आनुवंशिक, प्रजातीय और पारिस्थितिकीय विविधता।

आनुवंशिक विविधता किसी एक प्रजाति के भीतर पाए जाने वाले जीनों की भिन्नता को दर्शाती है। उदाहरण के लिए, भारत में चावल की हजारों किस्में और आम की विविध प्रजातियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि एक ही प्रजाति के भीतर कितनी विविधता संभव है। यह विविधता जीवों को बदलते पर्यावरण में अनुकूलन करने की क्षमता प्रदान करती है और उनके अस्तित्व को सुरक्षित रखती है।

प्रजातीय विविधता किसी क्षेत्र में पाई जाने वाली विभिन्न प्रजातियों की संख्या और प्रकार को दर्शाती है। पश्चिमी घाट और पूर्वोत्तर भारत जैसे क्षेत्र प्रजातीय विविधता के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, जहाँ हजारों प्रकार के पौधे और जीव पाए जाते हैं। यह विविधता पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

पारिस्थितिकीय विविधता उन विभिन्न पारिस्थितिक तंत्रों को दर्शाती है, जिनमें जीव रहते हैं–जैसे वन, घासभूमि, मरुस्थल, आर्द्रभूमि और पर्वतीय क्षेत्र। भारत की भौगोलिक विविधता इसे विश्व के 12 मेगा–बायोडायवर्स देशों में शामिल करती है।

पृथ्वी पर कुल प्रजातियों की संख्या का अनुमान लगाना आज भी एक चुनौती है। लगभग 1.5 मिलियन प्रजातियाँ वैज्ञानिक रूप से दर्ज की जा चुकी हैं, लेकिन अनुमान है कि वास्तविक संख्या 7 मिलियन या उससे भी अधिक हो सकती है। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अभी भी लाखों प्रजातियाँ खोजे जाने की प्रतीक्षा कर रही हैं। यह तथ्य इस बात को दर्शाता है कि हम अभी भी प्रकृति को पूरी तरह नहीं समझ पाए हैं।

जैव–विविधता का वितरण पृथ्वी पर समान नहीं है। यह विषुवत रेखा के निकट अधिक और ध्रुवों की ओर कम होती जाती है, जिसे "अक्षांशीय प्रवणता" (Latitudinal Gradient) कहा जाता है। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अधिक विविधता के पीछे कई कारण हैं–जैसे स्थिर जलवायु, अधिक सौर ऊर्जा, और लंबा विकासात्मक इतिहास। अमेज़न वर्षावन और भारत के पश्चिमी घाट इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

एक और महत्वपूर्ण सिद्धांत "प्रजाति–क्षेत्र संबंध" (Species&Area Relationship) है, जिसके अनुसार किसी क्षेत्र का आकार जितना बड़ा होगा, वहाँ प्रजातियों की संख्या भी उतनी अधिक होगी। यह संबंध पारिस्थितिकी में एक मौलिक नियम के रूप में स्थापित है और संरक्षण योजनाओं में इसका विशेष महत्व है।

जैव–विविधता का महत्व केवल पारिस्थितिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि मानव जीवन के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। भोजन, औषधि, ईंधन, वस्त्र और अनेक औद्योगिक उत्पाद सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से जैव–विविधता पर निर्भर हैं। आज भी विश्व की लगभग 25 प्रतिशत औषधियाँ पौधों से प्राप्त होती हैं। इसके अलावा, परागण, जल शुद्धिकरण, जलवायु संतुलन और मिट्टी की उर्वरता जैसी पारिस्थितिक सेवाएँ जीवन के लिए अनिवार्य हैं।

परंतु वर्तमान समय में जैव–विविधता अभूतपूर्व संकट का सामना कर रही है। मानव गतिविधियाँ–जैसे वनों की कटाई, नगरीकरण, औद्योगिकीकरण, अत्यधिक संसाधन दोहन और प्रदूषण– इस ह्रास के प्रमुख कारण हैं। इसके अतिरिक्त, विदेशी प्रजातियों का आक्रमण भी स्थानीय प्रजातियों के अस्तित्व के लिए खतरा बन रहा है।

वैज्ञानिकों ने जैव–विविधता ह्रास के चार प्रमुख कारण बताए हैं, जिन्हें "Evil Quartet" कहा जाता है–आवास विनाश और विखंडन, अत्यधिक शोषण, विदेशी प्रजातियों का आक्रमण और सह–विलुप्ति। उदाहरण के लिए, जब किसी पौधे की प्रजाति विलुप्त होती है, तो उससे जुड़े कीट या परागणकर्ता भी समाप्त हो सकते हैं।

वर्तमान में प्रजातियों के विलुप्त होने की दर प्राकृतिक दर से कई गुना अधिक है, जिसे "छठा महाविलुप्ति काल" कहा जा रहा है। वैज्ञानिक चेतावनी देते हैं कि यदि यही स्थिति बनी रही, तो आने वाले समय में पृथ्वी की जैव–विविधता का बड़ा हिस्सा समाप्त हो सकता है।

जैव–विविधता के संरक्षण के लिए वैश्विक और स्थानीय स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। संरक्षण के दो प्रमुख तरीके हैं–'in situ संरक्षण, जिसमें जीवों को उनके प्राकृतिक आवास में सुरक्षित रखा जाता है, और ''ex situ संरक्षण', जिसमें उन्हें कृत्रिम वातावरण में संरक्षित किया जाता है। भारत में राष्ट्रीय उद्यान, वन्यजीव अभयारण्य और बायोस्फीयर रिजर्व इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं।

इसके साथ ही, "बायोडायवर्सिटी हॉटस्पॉट" की अवधारणा भी महत्वपूर्ण है, जहाँ अत्यधिक प्रजातीय विविधता और उच्च स्तर की स्थानिकता (endemism) पाई जाती है। भारत में पश्चिमी घाट, हिमालय और इंडो–बर्मा क्षेत्र ऐसे हॉटस्पॉट हैं।

जैव–विविधता संरक्षण का एक नैतिक पक्ष भी है। प्रत्येक जीव का अपना अस्तित्व और महत्व है, चाहे वह मनुष्य के लिए उपयोगी हो या नहीं। यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम इस प्राकृतिक विरासत को आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखें।

अंततः, जैव–विविधता केवल प्रकृति की सुंदरता नहीं, बल्कि जीवन की स्थिरता का आधार है। यह हमें सिखाती है कि पृथ्वी पर हर जीव का एक महत्व है और सभी मिलकर एक संतुलित प्रणाली का निर्माण करते हैं। यदि यह संतुलन बिगड़ता है, तो इसका प्रभाव सीधे मानव जीवन पर पड़ता है।

इसलिए, जैव–विविधता का संरक्षण केवल एक पर्यावरणीय मुद्दा नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व का प्रश्न है। जब हम प्रकृति को बचाते हैं, तो वास्तव में हम स्वयं को बचा रहे होते हैं।

युद्ध की छाया में सिसकती जैवविविधताः भारत तक पहुंचता पर्यावरणीय संकट

अमेरिका और ईरान के बीच संभावित संघर्ष को यदि केवल एक क्षेत्रीय या राजनीतिक घटना मान लिया जाए, तो यह एक बड़ी भूल होगी। वास्तव में यह संकट सीमाओं को पार करते हुए जैवविविधता और पर्यावरण के माध्यम से भारत जैसे देशों तक भी गहराई से प्रभाव डाल सकता है। प्रकृति की कोई सीमा नहीं होती—और यही कारण है कि युद्ध के दुष्प्रभाव भी वैश्विक हो जाते हैं।

सबसे पहला प्रभाव वायु प्रदूषण के रूप में सामने आ सकता है। यदि तेल रिफाइनरियों और भंडारों में आग लगती है, तो उससे उठने वाला काला धुआं और सूक्ष्म कण ऊपरी वायुमंडल में पहुंचकर लंबी दूरी तय कर सकते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार, पश्चिम एशिया से उठने वाले ये प्रदूषक कण अनुकूल हवाओं के साथ भारत के पश्चिमी राज्यों—गुजरात, राजस्थान और पंजाब—तक पहुंच सकते हैं। इसका असर केवल हवा की गुणवत्ता पर ही नहीं, बल्कि वहां की स्थानीय जैवविविधता पर भी पड़ेगा। पेड़—पौधों की पत्तियों पर जमने वाले कण प्रकाश संश्लेषण को बाधित करते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है।

इस प्रदूषण का एक और गंभीर रूप है अम्लीय वर्षा (एसिड रेन)। जब वातावरण में मौजूद सल्फर और नाइट्रोजन यौगिक वर्षा के साथ मिलते हैं, तो वे मिट्टी की रासायनिक संरचना को बदल देते हैं। भारत के शुष्क और अर्ध—शुष्क क्षेत्रों में यदि ऐसी वर्षा होती है, तो मिट्टी की उर्वरता 10—20 वर्षों तक प्रभावित हो सकती है। इसका सीधा प्रभाव कृषि उत्पादन पर पड़ेगा, जिससे खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण अर्थव्यवस्था दोनों प्रभावित होंगी। यह स्थिति केवल आर्थिक संकट नहीं, बल्कि पारिस्थितिकी असंतुलन का भी संकेत होगी।

समुद्री जैवविविधता पर भी इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव संभव है। अरब सागर, जो भारत के पश्चिमी तट से जुड़ा है, फारस की खाड़ी से जैविक रूप से संबंधित है। यदि खाड़ी क्षेत्र में बड़े पैमाने पर तेल रिसाव होता है, तो समुद्री धाराओं के माध्यम से उसका प्रभाव भारतीय समुद्री पारिस्थितिकी तक पहुंच सकता है। इससे मछलियों, प्लवक और अन्य समुद्री जीवों पर असर पड़ेगा, जो लाखों लोगों की आजीविका का आधार हैं।

प्रवासी पक्षियों के संदर्भ में भी भारत इस संकट से अछूता नहीं रहेगा। पश्चिम एशिया से होकर आने वाले अनेक प्रवासी पक्षी भारत के आर्द्रभूमि क्षेत्रों और अभयारण्यों में शीतकाल बिताते हैं। यदि युद्ध के कारण उनके मार्ग बाधित होते हैं, तो भारत में उनकी संख्या घट सकती है। इससे स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि ये पक्षी बीज फैलाव और कीट नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सबसे चिंताजनक प्रभाव मानव स्वास्थ्य और जैवविविधता के बीच संबंध में देखा जा सकता है। भारी धातुएं जैसे लेड और मरकरी, जो युद्ध के दौरान वातावरण में फैलती हैं, खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर सकती हैं। ये तत्व धीरे—धीरे पौधों, पशुओं और अंततः मनुष्यों के शरीर में जमा होते हैं। इसका परिणाम न्यूरोलॉजिकल विकार, कैंसर और अन्य गंभीर बीमारियों के रूप में सामने आ सकता है। इस प्रकार जैवविविधता का संकट सीधे मानव स्वास्थ्य का संकट बन जाता है।

जलवायु परिवर्तन पर भी इसका प्रभाव भारत के लिए गंभीर होगा। युद्ध के कारण बढ़ने वाले ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन वैश्विक तापमान को बढ़ाएंगे, जिससे भारत में पहले से ही बढ़ती गर्मी, अनियमित मानसून और चरम मौसम की घटनाएं और तीव्र हो सकती हैं। इसका असर हिमालयी पारिस्थितिकी, ग्लेशियरों और नदियों पर पड़ेगा—जो भारत की जीवनरेखा हैं।

यह स्पष्ट है कि अमेरिका–ईरान संघर्ष केवल दूर कहीं घटने वाली घटना नहीं है, बल्कि इसका प्रभाव भारत की हवा, पानी, मिट्टी और जैवविविधता तक पहुंच सकता है। यह हमें यह समझने के लिए मजबूर करता है कि पर्यावरणीय संकट अब स्थानीय नहीं रहे–वे वैश्विक हैं और परस्पर जुड़े हुए हैं।

इसलिए आवश्यक है कि भारत जैसे देश केवल दर्शक बनकर न रहें, बल्कि अंतरराष्ट्रीय मंचों पर "पर्यावरणीय सुरक्षा" को युद्ध नीति का अनिवार्य हिस्सा बनाने की मांग करें। साथ ही, देश के भीतर निगरानी तंत्र, वायु गुणवत्ता नियंत्रण और पारिस्थितिकी संरक्षण को मजबूत किया जाए।

क्योंकि अंततः, युद्ध चाहे कहीं भी हो–उसकी गूंज प्रकृति के माध्यम से हर उस जगह तक पहुंचती है, जहां जीवन मौजूद है। और इस गूंज में सबसे धीमी लेकिन सबसे गहरी आवाज होती है–जैवविविधता के क्षरण की।

जैव विविधता संरक्षण में क्वांटम की भूमिका: भविष्य का वैज्ञानिक कदम

आज जब पृथ्वी अभूतपूर्व पर्यावरणीय संकटों से जूझ रही है, जैव विविधता संरक्षण केवल एक पर्यावरणीय मुद्दा नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व का प्रश्न बन चुका है। भारत जैसे देश, जहाँ दुनिया की लगभग 8 प्रतिशत प्रजातियाँ पाई जाती हैं, वहाँ आवास विनाश, जलवायु परिवर्तन और प्रदूषण जैसे खतरे तेजी से जैव विविधता को प्रभावित कर रहे हैं। ऐसे जटिल परिदृश्य में पारंपरिक संरक्षण उपायों के साथ–साथ उन्नत तकनीकों की आवश्यकता महसूस हो रही है–और यहीं से 'क्वांटम कंप्यूटिंग' एक नई उम्मीद के रूप में उभरती है।

क्वांटम कंप्यूटिंग पारंपरिक कंप्यूटरों से बिल्कुल अलग तरीके से काम करती है। यह सूचनाओं को केवल 0 और 1 के रूप में नहीं, बल्कि एक साथ कई अवस्थाओं में संसाधित कर सकती है। इसका मतलब है कि यह अत्यधिक जटिल समस्याओं को बहुत तेजी और गहराई से हल करने में सक्षम है। जैव विविधता संरक्षण में यह क्षमता बेहद उपयोगी साबित हो सकती है, क्योंकि प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र असंख्य कारकों के जटिल संबंधों पर आधारित होते हैं।

सबसे बड़ा उपयोग 'पर्यावरणीय मॉडलिंग और पूर्वानुमान' में देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी क्षेत्र का तापमान बढ़ता है, तो उसका असर वहाँ की वनस्पति, पक्षियों और कीटों पर कैसे पड़ेगा–इसका सटीक अनुमान लगाना कठिन होता है। क्वांटम कंप्यूटिंग भविष्य में इन सभी कारकों को एक साथ जोड़कर अधिक सटीक भविष्यवाणियाँ कर सकती है, जिससे समय रहते संरक्षण कदम उठाए जा सकें।

दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र है 'संसाधनों का बेहतर उपयोग'। संरक्षण के लिए हमेशा सीमित संसाधन उपलब्ध होते हैं–चाहे वह धन हो या मानव शक्ति। क्वांटम तकनीकी जटिल गणनाओं के माध्यम से यह तय करने में मदद कर सकती है कि किन क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जाए, कहाँ वन्यजीव गलियारे बनाए जाएँ और किन प्रजातियों पर अधिक ध्यान दिया जाए। इससे कम संसाधनों में अधिक प्रभावी संरक्षण संभव हो सकता है।

इसके अलावा, 'आनुवंशिक विश्लेषण' में भी क्वांटम की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। किसी प्रजाति की आनुवंशिक विविधता को समझना उसके दीर्घकालिक अस्तित्व के लिए आवश्यक है। क्वांटम आधारित विश्लेषण जीन डेटा को तेजी से समझकर संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और प्रजनन कार्यक्रमों को अधिक प्रभावी बना सकता है।

आज के दौर में 'रीयल–टाइम मॉनिटरिंग' भी बेहद महत्वपूर्ण है। उपग्रह, ड्रोन और सेंसर से मिलने वाले डेटा का विश्लेषण करके अवैध कटाई, शिकार या पर्यावरणीय बदलावों का तुरंत पता लगाया जा सकता है। क्वांटम कंप्यूटिंग इस डेटा को और अधिक तेजी से संसाधित कर त्वरित निर्णय लेने में मदद कर सकती है।

हालांकि, यह तकनीकी अभी शुरुआती दौर में है और इसके सामने कई चुनौतियाँ हैं–जैसे उच्च लागत, तकनीकी जटिलता और विशेषज्ञता की कमी। फिर भी, भविष्य में पारंपरिक तकनीकों के साथ मिलकर यह संरक्षण विज्ञान को नई ऊँचाइयों तक ले जा सकती है।

अंततः, क्वांटम कंप्यूटिंग हमें प्रकृति को समझने और बचाने का एक नया दृष्टिकोण देती है। यदि इसे सही दिशा में विकसित और उपयोग किया गया, तो यह जैव विविधता संरक्षण में एक क्रांतिकारी बदलाव ला सकती है–और हमें एक अधिक सुरक्षित और संतुलित पृथ्वी की ओर ले जा सकती है।

मानव बुद्धि बनाम कृत्रिम बुद्धिमत्ताः प्रतिस्पर्धा नहीं, समझदारी भरी साझेदारी का समय

आज के दौर में कृत्रिम बुद्धिमत्ता यानी AI को लेकर जितनी उत्सुकता है, उतनी ही उलझन भी है। अक्सर लोग यह सवाल पूछते हैं कि क्या AI कभी मनुष्य जितना बुद्धिमान हो जाएगा, क्या मशीनें इंसानों की जगह ले लेंगी, और क्या भविष्य में मानव मस्तिष्क से भी अधिक सक्षम डिजिटल प्रणालियाँ हमारे निर्णयों पर हावी हो जाएँगी। परंतु इस बहस का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि मानव बुद्धि और कृत्रिम बुद्धिमत्ता को एक ही पैमाने से मापना शायद मूलतः गलत है। दोनों की प्रकृति, कार्यप्रणाली, सीमाएँ और क्षमताएँ इतनी भिन्न हैं कि उन्हें प्रतिद्वंद्वी के रूप में नहीं, बल्कि पूरक शक्तियों के रूप में समझना अधिक उचित होगा।

मनुष्य अपनी बुद्धि को अक्सर "वास्तविक" बुद्धि मानता है। यही कारण है कि जब हम AI की बात करते हैं, तो अनजाने में उसे मानव जैसी चेतना, समझ, संवेदना और तर्क से जोड़कर देखने लगते हैं। लेकिन बुद्धिमत्ता केवल मानव–जैसी सोच का नाम नहीं है। यदि बुद्धि को जटिल लक्ष्यों को प्राप्त करने की क्षमता माना जाए, तो यह क्षमता कई रूपों में संभव है। मनुष्य की बुद्धि जैविक विकास की लंबी प्रक्रिया से बनी है, जबकि AI का विकास डिजिटल संरचना, एल्गोरिद्म, डेटा और संगणना पर आधारित है। इसलिए दोनों का "सोचने" का तरीका मूलतः अलग है।

मानव मस्तिष्क अत्यंत अद्भुत है, लेकिन सर्वशक्तिमान नहीं। हम स्वयं को तर्कशील और विवेकशील प्राणी मानते हैं, पर वास्तव में हमारी संज्ञानात्मक क्षमता सीमित है। हम एक समय में बहुत कम सूचनाओं को सचेत रूप से संसाधित कर पाते हैं। हमारा ध्यान भटकता है, स्मृति कमजोर पड़ती है, निर्णय पूर्वाग्रहों से प्रभावित होते हैं, और हम अक्सर भावनाओं, सामाजिक दबाव, अधूरी जानकारी तथा मानसिक शॉर्टकट्स के आधार पर निर्णय लेते हैं। उपलब्धता पूर्वाग्रह, पुष्टि पूर्वाग्रह, एंकरिंग, हाइंडसाइट बायस जैसे अनेक मानसिक झुकाव हमारे निर्णयों को प्रभावित करते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि मनुष्य बुद्धिहीन है, बल्कि यह कि मानव बुद्धि अपनी जैविक संरचना के कारण सीमित और अपूर्ण है।

इसके विपरीत, AI विशाल डेटा को अत्यंत तीव्र गति से संसाधित कर सकता है, जटिल गणनाएँ कर सकता है, पैटर्न पहचान सकता है, और समान परिस्थितियों में अधिक स्थिर एवं सुसंगत निर्णय दे सकता है। जहाँ मनुष्य थकता है, भूलता है, भावनात्मक रूप से विचलित होता है, वहाँ AI निरंतर कार्य कर सकता है। मशीनों की गति, कनेक्टिविटी, अद्यतन होने की क्षमता और विस्तारशीलता उन्हें कई विशिष्ट कार्यों में अत्यधिक शक्तिशाली बनाती है। यदि किसी एल्गोरिद्म ने कोई कौशल सीख लिया, तो उसे तुरंत अनेक प्रणालियों में लागू किया जा सकता है। यह सुविधा मानव मस्तिष्क में संभव नहीं।

फिर भी AI को मानव से श्रेष्ठ घोषित कर देना जल्दबाजी होगी। यहाँ एक रोचक वैज्ञानिक विचार सामने आता है, जिसे मोरावेक्स पैराडॉक्स कहा जाता है। इसका अर्थ है कि जो कार्य मनुष्यों को कठिन लगते हैं, जैसे गणना, सांख्यिकीय विश्लेषण या तर्क, वे मशीनों के लिए अपेक्षाकृत आसान होते हैं; जबकि जो कार्य मनुष्यों को बहुत सहज लगते हैं, जैसे चेहरा पहचानना, सामाजिक संकेत समझना, भाषा के संदर्भ पकड़ना, अनपेक्षित परिस्थिति में व्यवहार बदलना, या शरीर के संतुलन के साथ चलना–फिरना, वे मशीनों के लिए अत्यंत कठिन हो सकते हैं। इस विरोधाभास से यह स्पष्ट होता है कि कठिनाई और जटिलता एक ही बात नहीं हैं। मनुष्य और मशीन अलग–अलग प्रकार की जटिलताओं में दक्ष होते हैं।

यही वह बिंदु है जहाँ मानव–AI संबंध की सही दिशा दिखाई देती है। प्रश्न यह नहीं होना चाहिए कि AI मनुष्य जैसा कब बनेगा, बल्कि यह होना चाहिए कि AI और मनुष्य मिलकर किस प्रकार बेहतर परिणाम दे सकते हैं। हर क्षेत्र में मानव–जैसी सामान्य बुद्धिमत्ता विकसित करना न तो निकट भविष्य में व्यावहारिक लगता है, न ही हर स्थिति में आवश्यक। अधिक उपयोगी यह है कि हम संकीर्ण लेकिन अत्यंत सक्षम AI प्रणालियाँ विकसित करें, जो मनुष्य की सीमाओं की भरपाई करें। उदाहरण के लिए, चिकित्सा में रोग–पहचान, मौसम पूर्वानुमान, यातायात प्रबंधन, वित्तीय जोखिम विश्लेषण, भाषा अनुवाद, सुरक्षा निगरानी,

कृषि डेटा विश्लेषण और औद्योगिक स्वचालन जैसे क्षेत्रों में AI पहले से ही बड़ी भूमिका निभा रहा है।

इसका अर्थ यह भी है कि भविष्य की सबसे महत्वपूर्ण चुनौती "AI बनाना" भर नहीं होगी, बल्कि "AI के साथ समझदारी से काम करना" होगी। किसी भी मानव–AI प्रणाली की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि कौन–सा कार्य मशीन को देना सुरक्षित है, कहाँ मानव निरीक्षण आवश्यक है, और किन स्थितियों में अंतिम निर्णय मनुष्य के पास रहना चाहिए। यह समझ विकसित करना बहुत जरूरी है कि AI का निष्कर्ष हमेशा अंतिम सत्य नहीं होता, बल्कि उसे सत्यापन, मान्यता, नैतिकता और संदर्भ के साथ परखा जाना चाहिए।

AI के संदर्भ में भरोसा और पारदर्शिता भी बड़ा प्रश्न है। कई आधुनिक AI प्रणालियाँ, विशेषकर डीप लर्निंग आधारित मॉडल, "ब्लैक बॉक्स" की तरह कार्य करती हैं। वे सही परिणाम तो दे सकती हैं, लेकिन उस निष्कर्ष तक पहुँचने की प्रक्रिया मनुष्य के लिए स्पष्ट नहीं होती। दिलचस्प बात यह है कि मानव मस्तिष्क भी पूरी तरह पारदर्शी नहीं है। हम भी अक्सर अपने निर्णयों के वास्तविक कारण नहीं समझते, बल्कि बाद में उनकी व्याख्या गढ़ लेते हैं। इसलिए केवल इस आधार पर AI को अविश्वसनीय मान लेना उचित नहीं कि वह हर निर्णय को सरल भाषा में नहीं समझा सकता। अधिक महत्वपूर्ण यह है कि उसकी कार्यक्षमता, विश्वसनीयता और सुरक्षा को वस्तुनिष्ठ रूप से परखा जाए।

भविष्य में सबसे अधिक प्रभाव शायद किसी एक सर्वज्ञानी AGI से नहीं, बल्कि अनेक परस्पर जुड़े संकीर्ण AI प्रणालियों से पड़ेगा। अलग–अलग क्षेत्रों में विशेषज्ञ AI मिलकर समाज, उद्योग, प्रशासन, शिक्षा और रक्षा जैसे क्षेत्रों को बदल सकते हैं। ऐसी स्थिति में मनुष्य की भूमिका समाप्त नहीं होगी, बल्कि और अधिक महत्वपूर्ण हो जाएगी। मनुष्य को नीति–निर्माता, नियंत्रक, नैतिक मार्गदर्शक, संदर्भ–विश्लेषक और अंतिम उत्तरदायी इकाई के रूप में कार्य करना होगा।

इसीलिए आज सबसे बड़ी आवश्यकता "इंटेलिजेंस अवेयरनेस" की है–अर्थात् यह समझ कि मानव और कृत्रिम बुद्धिमत्ता में क्या मूलभूत अंतर हैं, दोनों की शक्तियाँ और सीमाएँ क्या हैं, और किन परिस्थितियों में उनका संयोजन सर्वोत्तम परिणाम दे सकता है। आने वाले समय में शिक्षा और प्रशिक्षण का एक नया क्षेत्र विकसित होगा, जिसमें लोगों को यह सिखाया जाएगा कि AI कैसे सोचता है, कहाँ गलती कर सकता है, कब उस पर भरोसा किया जा सकता है, और किस तरह मानवीय निर्णय क्षमता के साथ उसका संतुलित उपयोग किया जाए।

अंततः मानव बुद्धि और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बीच संबंध को संघर्ष की कथा के रूप में नहीं देखना चाहिए। मनुष्य चेतना, अनुभव, सामाजिक समझ, नैतिक संवेदनशीलता और लचीलेपन का वाहक है; जबकि AI गति, गणना, पैटर्न विश्लेषण, विशाल स्मृति और निरंतरता का। जब ये दोनों अपनी–अपनी विशेषताओं के साथ सही ढंग से जुड़ते हैं, तभी एक अधिक सक्षम, अधिक सुरक्षित और अधिक उपयोगी भविष्य का निर्माण संभव होता है। असली प्रश्न यह नहीं कि मशीनें इंसान बनेंगी या नहीं, बल्कि यह है कि इंसान मशीनों के साथ कितना बुद्धिमत्तापूर्ण सहकार्य सीख पाएगा।

सुपर इंटेलिजेंस बनाम आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस

मानवता का निर्णायक मोड़

तेजी से बदलती दुनिया में 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI)' अब केवल तकनीकी नहीं रही, बल्कि यह मानव सभ्यता के विकास का सबसे शक्तिशाली उपकरण बन चुकी है। लेकिन इस विकास की अगली सीढ़ी कृ 'सुपर इंटेलिजेंस (Super Intelligence)' – केवल एक उन्नत तकनीकी नहीं, बल्कि एक ऐसा मोड़ है जहाँ मानवता को अपने अस्तित्व, भूमिका और भविष्य पर पुनर्विचार करना होगा।

AI क्या है और इसकी सीमाएँ

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आज हमारे जीवन का अभिन्न हिस्सा है – चाहे वह मोबाइल में वॉइस असिस्टेंट हो, चिकित्सा में निदान प्रणाली, या स्मार्ट शहरों की निगरानी।
लेकिन वर्तमान AI मुख्यतः 'नैरो AI (Narrow AI)' है, जो सीमित कार्यों में ही उत्कृष्ट होता है। यह डेटा से सीखता है, पैटर्न पहचानता है, लेकिन इसमें 'स्वतंत्र सोच, आत्म–जागरूकता और गहन समझ' की कमी होती है।

सुपर इंटेलिजेंसः अगली क्रांति

सुपर इंटेलिजेंस (SI), जिसे अक्सर 'Artificial General Intelligence (AGI)' के रूप में देखा जाता है, एक ऐसी प्रणाली है जोः

- मानव से अधिक तेजी से सीख सकती है
- जटिल समस्याओं को हल कर सकती है
- रचनात्मकता और निर्णय लेने में मानव से आगे निकल सकती है

यह केवल "स्मार्ट मशीन" नहीं होगी, बल्कि एक 'स्वायत्त बुद्धिमान इकाई' होगी, जो खुद को बेहतर बना सकती है।

निर्णायक बदलावः शक्ति या खतरा?

AI से सुपर इंटेलिजेंस की यात्रा केवल तकनीकी नहीं, बल्कि 'नैतिक और अस्तित्वगत परिवर्तन' है।

'सकारात्मक संभावनाएँः'

- असाध्य बीमारियों का इलाज
- जलवायु परिवर्तन के समाधान
- संसाधनों का कुशल प्रबंधन
- वैज्ञानिक खोजों में क्रांति

'संभावित खतरेः'

- मानव नियंत्रण का समाप्त होना
- रोजगार का व्यापक संकट
- निर्णयों में पक्षपात और असंतुलन
- अस्तित्वगत जोखिम – यदि मशीनें मानव हितों के विपरीत निर्णय लें

"ह्यूमन क्वेश्चन": हमारी भूमिका क्या होगी?

सबसे बड़ा सवाल यह नहीं है कि मशीनें कितनी बुद्धिमान होंगी, बल्कि यह है कि 'मानव कहाँ खड़ा होगा'। क्या हम:

- मशीनों के नियंत्रक रहेंगे?
- उनके सहयोगी बनेंगे?
- या धीरे–धीरे अप्रासंगिक हो जाएंगे?

यह प्रश्न हमें तकनीकी से अधिक 'मानव मूल्यों, नैतिकता और चेतना' पर सोचने के लिए मजबूर करता है।

संतुलन की आवश्यकता

विशेषज्ञ मानते हैं कि सुपर इंटेलिजेंस का विकास तभी सुरक्षित होगा जब:

- AI Alignment (मानव मूल्यों के अनुरूप AI) सुनिश्चित किया जाए
- पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ाई जाए
- वैश्विक स्तर पर नियम और नीति बनाई जाए

निष्कर्ष: भविष्य का सह–निर्माण

सुपर इंटेलिजेंस मानव इतिहास की सबसे बड़ी छलांग हो सकती है – या सबसे बड़ा जोखिम।
यह इस बात पर निर्भर करेगा कि हम इसे कैसे विकसित करते हैं।

- यदि हम विज्ञान के साथ 'नैतिकता और जिम्मेदारी' को जोड़ते हैं, तो यह तकनीकी मानवता को नई ऊँचाइयों तक ले जा सकती है।
- लेकिन यदि हम नियंत्रण खो देते हैं, तो यह वही शक्ति बन सकती है जो हमें चुनौती दे।

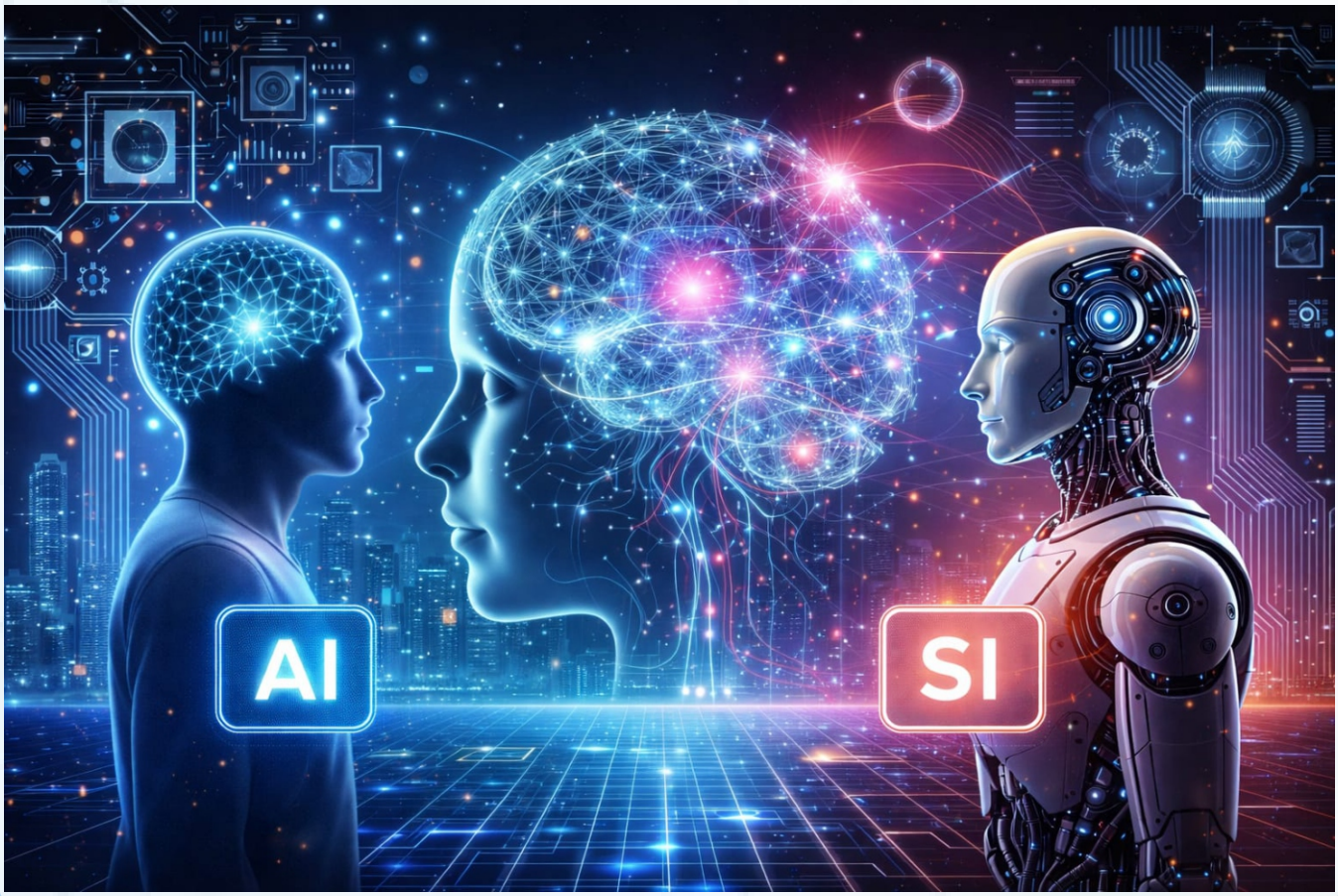

साइबर सुरक्षा और तकनीकी: डिजिटल युग की अनिवार्य ढाल

आज का समय तकनीकी का समय है। हमारा बैंक, हमारा मोबाइल, हमारी पढ़ाई, हमारे कार्यालय, अस्पताल, बिजली व्यवस्था, परिवहन तंत्र, यहां तक कि घरों के स्मार्ट उपकरण भी डिजिटल नेटवर्क पर निर्भर होते जा रहे हैं। तकनीकी ने जीवन को तेज, सरल और अधिक सुविधाजनक बनाया है, लेकिन इसी के साथ एक बड़ा प्रश्न भी खड़ा हुआ है–क्या हमारी डिजिटल दुनिया सुरक्षित है? इसी प्रश्न का उत्तर है 'साइबर सुरक्षा'।

साइबर सुरक्षा केवल कंप्यूटर को वायरस से बचाने का नाम नहीं है, बल्कि यह उन सभी तकनीकों, प्रक्रियाओं और व्यवहारों का समुच्चय है जो नेटवर्क, डिवाइस, सॉफ्टवेयर, सर्वर और डेटा को अनधिकृत पहुंच, हमलों, चोरी और क्षति से सुरक्षित रखते हैं। सरल शब्दों में कहें तो साइबर सुरक्षा वह सुरक्षा कवच है जो डिजिटल दुनिया को सुरक्षित, विश्वसनीय और कार्यक्षम बनाए रखता है।

साइबर सुरक्षा का मूल आधार तीन प्रमुख स्तंभों पर टिका है, जिन्हें सामान्यतः 'सीआईए ट्रायड' कहा जाता है– 'Confidentiality, Integrity and Availability' गोपनीयता का अर्थ है कि संवेदनशील जानकारी केवल अधिकृत व्यक्तियों तक ही सीमित रहे। अखंडता का अर्थ है कि डेटा में बिना अनुमति कोई बदलाव न हो। उपलब्धता का अर्थ है कि जरूरत पड़ने पर सही व्यक्ति सही सूचना तक पहुंच सके। यदि इन तीनों में से किसी एक पर भी आघात होता है, तो डिजिटल व्यवस्था कमजोर पड़ जाती है।

तकनीकी के विस्तार के साथ साइबर सुरक्षा के क्षेत्र भी व्यापक हुए हैं। 'नेटवर्क सुरक्षा' का काम किसी संस्था के नेटवर्क को अनधिकृत प्रवेश से बचाना है। इसके लिए फायरवॉल, वीपीएन, इंट्रूजन डिटेक्शन सिस्टम और नेटवर्क सेगमेंटेशन जैसे उपाय अपनाए जाते हैं। 'एंडपॉइंट सुरक्षा' लैपटॉप, मोबाइल, टैबलेट और डेस्कटॉप जैसे उपकरणों की रक्षा करती है, क्योंकि अक्सर हमलावर सबसे पहले इन्हीं उपकरणों को निशाना बनाते हैं। 'क्लाउड सुरक्षा' आज विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि बहुत–सा डेटा अब स्थानीय कंप्यूटरों में नहीं, बल्कि क्लाउड सर्वरों में संग्रहीत होता है। 'आईडेंटिटी एंड एक्सेस मैनेजमेंट' यह सुनिश्चित करता है कि केवल अधिकृत व्यक्ति ही किसी सिस्टम में प्रवेश कर सकें। इसके लिए मल्टी–फैक्टर ऑथेंटिकेशन, बायोमेट्रिक सत्यापन और जीरो ट्रस्ट जैसी अवधारणाएं उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। वहीं 'आईओटी सुरक्षा' भी तेजी से महत्वपूर्ण बन रही है, क्योंकि स्मार्ट कैमरे, सेंसर, स्मार्ट टीवी और स्मार्ट होम उपकरण अब साइबर हमलों के नए प्रवेश–द्वार बन सकते हैं।

साइबर खतरों का संसार भी लगातार बदल रहा है। पहले साधारण वायरस और वर्म चर्चा में रहते थे, लेकिन अब हमले अधिक संगठित, बुद्धिमान और लक्षित हो चुके हैं। 'फिशिंग' ऐसा हमला है जिसमें हमलावर किसी विश्वसनीय संस्था या व्यक्ति का रूप धारण कर उपयोगकर्ता से पासवर्ड, बैंकिंग सूचना या ओटीपी हासिल करने की कोशिश करता है। 'रैनसमवेयर' में हमलावर डेटा को एन्क्रिप्ट कर देता है और उसे वापस खोलने के बदले धन की मांग करता है। 'मैलवेयर, ''ट्रोजन, ''स्पायवेयर, ''डीडीओएस हमले, ''मैन–इन–द–मिडिल हमले' और 'डेटा ब्रीच' आज सामान्य साइबर चुनौतियाँ बन चुके हैं। सबसे चिंताजनक बात यह है कि अब कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग कर साइबर हमले और अधिक परिष्कृत बनाए जा रहे हैं। नकली ई–मेल, डीपफेक आवाज, स्वचालित पासवर्ड–अटैक और लक्षित सोशल इंजीनियरिंग अब पहले से कहीं अधिक प्रभावी हो गए हैं।

यही कारण है कि साइबर सुरक्षा केवल तकनीकी विशेषज्ञों का विषय नहीं रह गया है। यह आम नागरिक, विद्यार्थी, शिक्षक, उद्यमी, वैज्ञानिक, सरकारी संस्थान और उद्योग–सभी की साझा जिम्मेदारी बन चुकी है। आज किसी एक कर्मचारी की लापरवाही, कमजोर पासवर्ड, असुरक्षित वाई–फाई या अपडेट न किए गए सॉफ्टवेयर से पूरी संस्था संकट में पड़ सकती है। डिजिटल दुनिया में मनुष्य को अक्सर सबसे कमजोर कड़ी माना जाता है; इसलिए साइबर सुरक्षा में तकनीकी जितनी आवश्यक है, उतनी ही आवश्यक है जागरूकता।

एक मजबूत साइबर सुरक्षा व्यवस्था के लिए कुछ बुनियादी उपाय अत्यंत उपयोगी हैं। मजबूत और अलग–अलग पासवर्ड का उपयोग, मल्टी–फैक्टर ऑथेंटिकेशन को सक्रिय रखना, समय–समय पर सॉफ्टवेयर अपडेट करना, केवल विश्वसनीय लिंक और ई–मेल खोलना, नियमित डेटा बैकअप रखना, सार्वजनिक वाई–फाई पर संवेदनशील कार्यों से बचना और कर्मचारियों को साइबर साक्षरता का प्रशिक्षण देना–ये सब सरल दिखने वाले उपाय वास्तव में बहुत प्रभावी रक्षा–कवच हैं। एन्क्रिप्शन, एक्सेस कंट्रोल, फायरवॉल और सुरक्षा नीतियाँ किसी भी संस्थागत डिजिटल ढांचे की रीढ़ हैं।

भारत के संदर्भ में साइबर सुरक्षा का महत्व और भी बढ़ जाता है। देश तेजी से डिजिटल भुगतान, ई–गवर्नेंस, ऑनलाइन शिक्षा, डिजिटल स्वास्थ्य सेवाओं और स्मार्ट अवसंरचना की ओर बढ़ रहा है। ऐसे में साइबर अपराध केवल आर्थिक नुकसान तक सीमित नहीं रहते; वे राष्ट्रीय सुरक्षा, सामाजिक विश्वास और सार्वजनिक सेवाओं की निरंतरता को भी प्रभावित कर सकते हैं। इसलिए तकनीकी विकास के साथ साइबर कानून, साइबर फोरेंसिक, डेटा संरक्षण नीति और डिजिटल नैतिकता को भी समान गति से मजबूत करना आवश्यक है।

साइबर सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण पक्ष 'साइबर फोरेंसिक' भी है। जब कोई डिजिटल अपराध घटित होता है, तब विशेषज्ञ इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्यों–जैसे ई–मेल, सर्वर लॉग, मोबाइल डेटा, हार्ड डिस्क और नेटवर्क ट्रैफिक–का वैज्ञानिक विश्लेषण कर अपराध के स्रोत, तरीके और उद्देश्य का पता लगाते हैं। यह क्षेत्र कानून, तकनीकी और जांच विज्ञान का संगम है, और आधुनिक न्याय व्यवस्था में इसकी भूमिका लगातार बढ़ रही है।

वास्तव में साइबर सुरक्षा और तकनीकी का संबंध विरोध का नहीं, बल्कि संतुलन का है। जितनी उन्नत तकनीकी होगी, उतनी ही उन्नत सुरक्षा की आवश्यकता होगी। तकनीकी हमें गति देती है, साइबर सुरक्षा हमें स्थिरता देती है। तकनीकी हमें अवसर देती है, साइबर सुरक्षा उन अवसरों की रक्षा करती है। बिना सुरक्षा के तकनीकी प्रगति अधूरी है, क्योंकि असुरक्षित डिजिटल भविष्य, विकास नहीं बल्कि जोखिम का विस्तार है।

आने वाले समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, क्वांटम कंप्यूटिंग, 5G, स्मार्ट सिटी, स्वचालित वाहन और इंटरनेट ऑफ थिंग्स जैसी तकनीकें हमारे जीवन को और अधिक डिजिटल बनाएंगी। ऐसे भविष्य में साइबर सुरक्षा केवल एक तकनीकी विषय नहीं, बल्कि सभ्य, सुरक्षित और जिम्मेदार डिजिटल समाज की आधारशिला होगी। इसलिए यह समझना जरूरी है कि साइबर सुरक्षा कोई वैकल्पिक सुविधा नहीं, बल्कि आधुनिक जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। डिजिटल युग में वही समाज सबसे अधिक सक्षम माना जाएगा, जो तक

सूक्ष्म जगत की अनदेखी दुनियाः माइक्रोबियल जैव विविधता का विज्ञान

पृथ्वी पर जीवन की असली नींव उन सूक्ष्म जीवों (Microorganisms) पर टिकी है, जिन्हें हम नंगी आँखों से देख भी नहीं सकते। यही अदृश्य संसार 'माइक्रोबियल जैव विविधता (Microbial Biodiversity)' कहलाता है। इसमें बैक्टीरिया, वायरस, फंगस, प्रोटोजोआ और आर्किया जैसे सूक्ष्म जीव शामिल होते हैं, जो पृथ्वी के हर कोने–मिट्टी, जल, वायु, मानव शरीर और यहां तक कि अत्यधिक प्रतिकूल परिस्थितियों–में भी पाए जाते हैं।

जीवन का आधारः सूक्ष्म जीवों की भूमिका

माइक्रोबियल विविधता केवल संख्या का खेल नहीं है, बल्कि यह पृथ्वी के पारिस्थितिक संतुलन की धुरी है।

- ये जीव 'पोषक चक्र (Nutrient Cycling)' में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जैसे नाइट्रोजन फिक्सेशन।
- मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और पौधों की वृद्धि में सहायता करते हैं।
- जल शुद्धिकरण और जैव अपघटन (Biodegradation) में योगदान देते हैं।
- मानव शरीर में मौजूद माइक्रोब (माइक्रोबायोम) पाचन, प्रतिरक्षा और स्वास्थ्य को नियंत्रित करते हैं।

विश्व स्तर पर देखा जाए तो '50 प्रतिशत से अधिक आधुनिक दवाएँ प्राकृतिक स्रोतों', विशेषकर सूक्ष्म जीवों से प्राप्त होती हैं–जैसे एंटीबायोटिक्स।

संरचना और विविधता

सूक्ष्म जीवों की संरचना अत्यंत विविध होती हैः

- 'वायरस': ये कोशिकाहीन (acellular) होते हैं और DNA या RNA तथा प्रोटीन कैप्सिड से बने होते हैं।
- 'बैक्टीरिया': प्रोकैरियोटिक कोशिकाएँ होती हैं, जिनके आकार–कॉक्काई (गोल), बैसिलाई (छड़ी), स्पाइरिला (सर्पिल)–हो सकते हैं।
- 'फंगस और प्रोटोजोआ': यूकैरियोटिक जीव, जो अधिक जटिल होते हैं।

यह विविधता न केवल संरचना में बल्कि उनके कार्यों, ऊर्जा प्राप्त करने के तरीकों और पर्यावरणीय अनुकूलन में भी दिखाई देती है।

पारिस्थितिकी और मानव जीवन में महत्व

माइक्रोबियल जैव विविधता के बिना जीवन संभव नहीं है।

- 'खाद्य सुरक्षा': 75 प्रतिशत वैश्विक फसलों का उत्पादन परागण और माइक्रोबियल क्रियाओं पर निर्भर है।
- 'जल संसाधन': स्वस्थ पारिस्थितिक तंत्र 75 प्रतिशत मीठे जल की उपलब्धता सुनिश्चित करते हैं।
- 'जलवायु नियंत्रण': वन और सूक्ष्म जीव CO_2 को अवशोषित कर जलवायु संतुलन बनाए रखते हैं।
- 'रोग नियंत्रण': जैव विविधता संतुलन बनाए रखती है, जिससे संक्रमण फैलने का खतरा कम होता है।

खतरेः तेजी से घटती सूक्ष्म विविधता

आज मानव गतिविधियों के कारण माइक्रोबियल जैव विविधता संकट में हैः

- वनों की कटाई और आवास विनाश
- प्रदूषण और रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग
- जलवायु परिवर्तन
- आक्रामक प्रजातियाँ

इन कारणों से पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ रहा है, जिससे नई बीमारियों (जूनोटिक रोग) का खतरा बढ़ रहा हैकृजैसे 75 प्रतिशत उभरती बीमारियाँ पशुओं से मनुष्यों में आती हैं।

सतत भविष्य की कुंजी

माइक्रोबियल विविधता को बचाना केवल पर्यावरण का नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व का प्रश्न है।

- जैविक खेती और प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग
- पारिस्थितिक तंत्रों का संरक्षण
- "One Health" दृष्टिकोण—मानव, पशु और पर्यावरण के स्वास्थ्य को एक साथ देखना
- पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान का समन्वय

सूक्ष्म जीव भले ही अदृश्य हों, लेकिन उनका प्रभाव असीमित है। वे पृथ्वी के "अदृश्य इंजीनियर" हैं, जो जीवन को बनाए रखते हैं। माइक्रोबियल जैव विविधता की रक्षा करना भविष्य की पीढ़ियों के लिए सुरक्षित, स्वस्थ और संतुलित पृथ्वी सुनिश्चित करने की दिशा में सबसे महत्वपूर्ण कदम है।

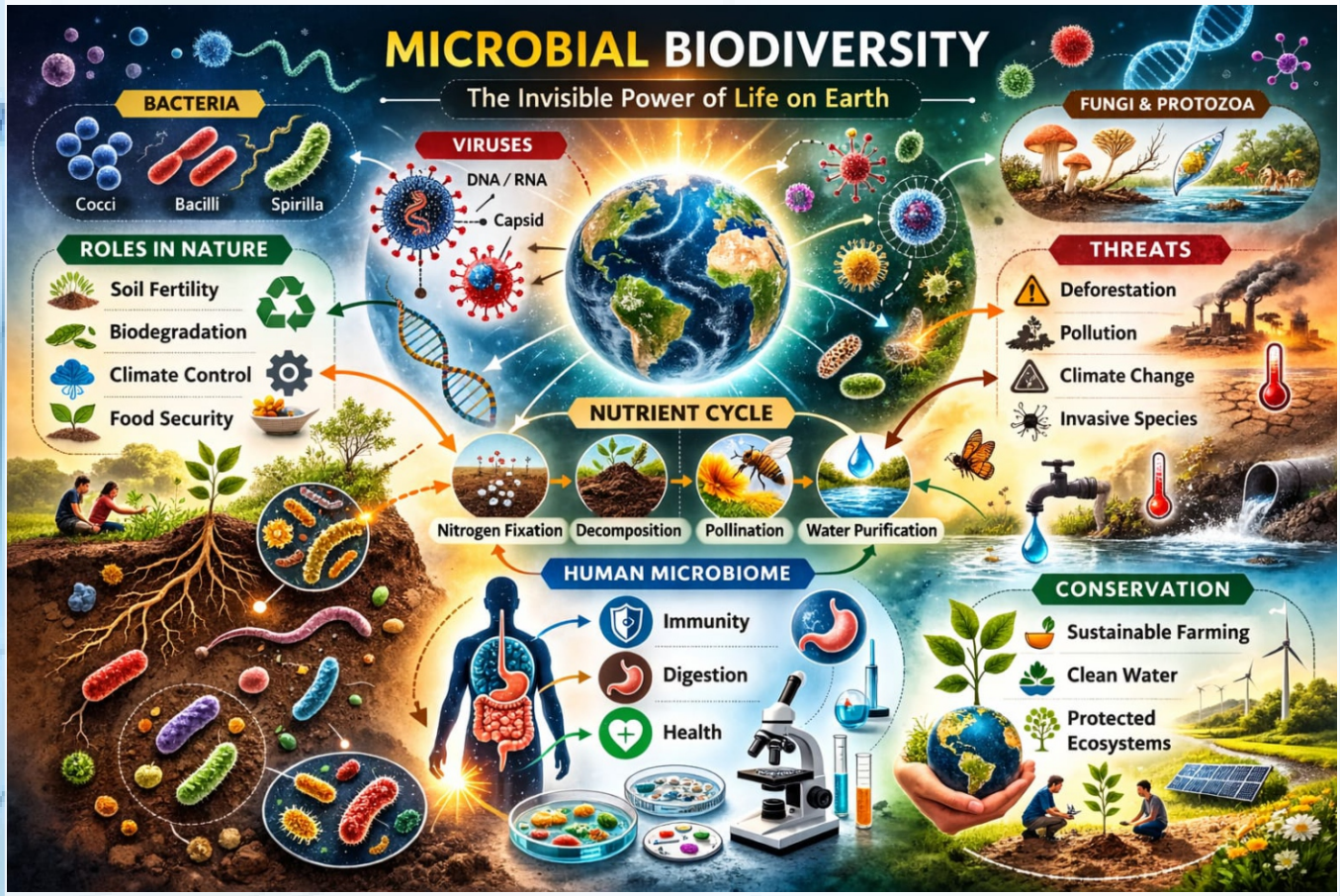

जैविक कीट नियंत्रण और जैव विविधता का संतुलन

आज की आधुनिक कृषि में जहाँ रासायनिक कीटनाशकों का व्यापक उपयोग हो रहा है, वहीं इसके दुष्प्रभाव भी स्पष्ट रूप से सामने आ रहे हैं–मिट्टी की उर्वरता में कमी, जल प्रदूषण, और सबसे महत्वपूर्ण, जैव विविधता का ह्रास। ऐसे समय में 'जैविक कीट नियंत्रण (Biological Pest Control)' एक प्राकृतिक और टिकाऊ समाधान के रूप में उभर रहा है, जो न केवल फसलों की रक्षा करता है बल्कि पर्यावरण के संतुलन को भी बनाए रखता है।

जैविक कीट नियंत्रण का मूल सिद्धांत है–'प्रकृति के अपने तंत्र का उपयोग करना'। इसमें रसायनों के स्थान पर प्राकृतिक शत्रुओं जैसे शिकारी कीट, परजीवी ततैया, नेमाटोड और लाभकारी सूक्ष्मजीवों का उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, लेडीबग (ladybird beetle) एफिड जैसे हानिकारक कीटों को खाकर उनकी संख्या नियंत्रित करती है। इसी तरह, कुछ सूक्ष्मजीव और कवक विशेष रूप से कीटों को संक्रमित कर उन्हें नष्ट कर देते हैं, जबकि अन्य जीवों को कोई नुकसान नहीं पहुँचाते।

इस प्रणाली का एक महत्वपूर्ण पहलू है 'संरक्षण जैव नियंत्रण (Conservation Biological Control)', जिसमें किसानों को अपने खेतों में ऐसे वातावरण का निर्माण करने के लिए प्रेरित किया जाता है जहाँ लाभकारी जीव आसानी से पनप सकें। खेतों के किनारों पर झाड़ियाँ, विविध फसलें और घास के छोटे क्षेत्र इन जीवों के लिए आश्रय स्थल का काम करते हैं। यह "प्राकृतिक सुरक्षा कवच" खेत को बाहरी कीटों से बचाने में मदद करता है।

जैविक कीट नियंत्रण में 'जैव कीटनाशक (Biopesticides)' भी अहम भूमिका निभाते हैं। नीम जैसे पौधों से बने उत्पाद या बैक्टीरिया आधारित कीटनाशक केवल लक्षित कीटों पर असर डालते हैं और मित्र कीटों–जैसे मधुमक्खियों और तितलियों–को सुरक्षित रखते हैं। यह विशेषता इसे पारंपरिक रासायनिक कीटनाशकों से अलग और अधिक सुरक्षित बनाती है।

इस पद्धति का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह 'परागणकों और मृदा स्वास्थ्य' की रक्षा करती है। मधुमक्खियाँ, जो वैश्विक खाद्य उत्पादन का एक बड़ा आधार हैं, रासायनिक प्रदूषण से सुरक्षित रहती हैं। साथ ही, मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीव भी सक्रिय रहते हैं, जिससे भूमि की उर्वरता और संरचना बेहतर बनी रहती है।

जैविक कीट नियंत्रण का एक और महत्वपूर्ण आयाम है 'परिदृश्य विविधता (Landscape Heterogeneity)' जब खेतों के आसपास विविध वनस्पतियाँ और प्राकृतिक आवास बनाए जाते हैं, तो यह लाभकारी जीवों के लिए सुरक्षित स्थान (Refugia) तैयार करता है। यह न केवल कीट नियंत्रण में मदद करता है बल्कि पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को मजबूत बनाता है।

अंततः, जैविक कीट नियंत्रण केवल एक कृषि तकनीकी नहीं, बल्कि 'प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व का एक दृष्टिकोण' है। यह हमें सिखाता है कि यदि हम प्रकृति के नियमों के साथ काम करें, तो हम न केवल अधिक स्वस्थ और सुरक्षित भोजन उत्पादन कर सकते हैं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक संतुलित और समृद्ध पर्यावरण भी सुनिश्चित कर सकते हैं।

गिद्धः जैव विविधता व पारिस्थितिकीय संतुलन में महत्वपूर्ण

Himalayan griffon vulture,
Himalayan vulture
(Gyps himalayensis)

भारत की जैव विविधता में गिद्धों का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, लेकिन आज ये पक्षी अस्तित्व के गंभीर संकट से गुजर रहे हैं। एक समय था जब आसमान में चक्कर लगाते गिद्ध आम दृश्य हुआ करते थे, परंतु आज स्थिति यह है कि देश के लगभग '72 प्रतिशत क्षेत्रों से गिद्ध गायब हो चुके हैं'। उनकी उपस्थिति 425 स्थानों से घटकर मात्र 67 स्थानों तक सीमित रह गई है। यह केवल एक प्रजाति का संकट नहीं, बल्कि पूरे पारिस्थितिकी तंत्र के असंतुलन का संकेत है।

गिद्धों को प्रकृति का "सफाई कर्मचारी" कहा जाता है। ये मृत जानवरों को तेजी से खाकर वातावरण को स्वच्छ रखते हैं। यदि गिद्ध न हों, तो सड़ते हुए शवों से खतरनाक बैक्टीरिया और वायरस फैल सकते हैं, जिससे 'एंथ्रेक्स, रेबीज और अन्य संक्रामक रोगों का खतरा बढ़ जाता है'। इस प्रकार गिद्ध सीधे तौर पर मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण सुरक्षा से जुड़े हुए हैं।

भारत में गिद्धों की कुल 9 प्रमुख प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से कई जैसे ओरिएंटल व्हाइट–बैक्ड, लॉन्ग–बिल्ड और स्लेंडर–बिल्ड गिद्ध अत्यंत संकटग्रस्त (Critically Endangered) श्रेणी में आ चुके हैं। इसका सबसे बड़ा कारण है पशुओं के इलाज में इस्तेमाल होने वाली कुछ दवाएं, विशेषकर 'डाइक्लोफेनैक'। जब गिद्ध ऐसे जानवरों के शव खाते हैं जिनमें यह दवा मौजूद होती है, तो उनके शरीर में विषाक्त प्रभाव पड़ता है और उनकी मृत्यु हो जाती है। यही कारण है कि भारत सरकार ने 2006 में इसके पशु उपयोग पर प्रतिबंध लगाया, और बाद में 2023 में कीटोप्रोफेन व एक्लोफेनैक जैसी दवाओं पर भी रोक लगाई गई।

इसके अलावा, गिद्धों के सामने अन्य खतरे भी हैं जैसेः–

- आवास (habitat) का नष्ट होना
- बिजली लाइनों और पवन चक्कियों से टकराव
- जहरीले पदार्थों से द्वितीयक विषाक्तता
- शिकार और अवैध व्यापार

गिद्धों की संख्या में आई इस भारी गिरावट का असर पूरे पारिस्थितिकी तंत्र पर पड़ रहा है। जहां गिद्ध कम हुए हैं, वहां 'कुत्तों और अन्य मांसाहारी जीवों की संख्या बढ़ी है, जिससे मानव–वन्यजीव संघर्ष और बीमारियों का खतरा बढ़ा है। यह स्थिति बताती है कि गिद्ध केवल एक पक्षी नहीं, बल्कि ''जैव विविधता संतुलन की महत्वपूर्ण कड़ी' हैं।

सरकार और विभिन्न संस्थाएं गिद्ध संरक्षण के लिए कई प्रयास कर रही हैं। "Vulture Action Plan 2020–25", गिद्ध प्रजनन केंद्र (Vulture Conservation Breeding Centres), और "Vulture Safe Zone" जैसे कार्यक्रम इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। साथ ही, सुरक्षित भोजन उपलब्ध कराना और विषैले रसायनों के उपयोग पर नियंत्रण भी आवश्यक है।

आगे का रास्ता स्पष्ट है–हमें गिद्धों के संरक्षण को केवल वन्यजीव संरक्षण के रूप में नहीं, बल्कि 'मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण संतुलन की सुरक्षा' के रूप में देखना होगा। यदि हम समय रहते इन मौन प्रहरी पक्षियों को बचा पाए, तो यह हमारी जैव विविधता को बचाने की दिशा में एक बड़ी सफलता होगी।

LPG गैस के विकल्पः ऊर्जा संकट में उभरती नई राह

आज के समय में ऊर्जा केवल सुविधा नहीं, बल्कि जीवन की मूल आवश्यकता बन चुकी है। भारत जैसे देश में रसोई गैस यानी LPG का उपयोग तेजी से बढ़ा है, लेकिन वैश्विक परिस्थितियों–जैसे तेल आपूर्ति में बाधा, बढ़ती कीमतें और भू–राजनीतिक तनाव–ने इसकी उपलब्धता और लागत दोनों को प्रभावित किया है। ऐसे समय में नए विकल्पों की खोज अनिवार्य हो गई है, और यही वह क्षण है जब विज्ञान समाधान लेकर सामने आया है।

हाल के वर्षों में वैज्ञानिकों ने डाइमिथाइल ईथर (DME) नामक एक नए ईंधन पर काम किया है, जिसे LPG के विकल्प के रूप में देखा जा रहा है। यह एक स्वच्छ और कुशल ईंधन है, जो पारंपरिक गैस की तुलना में कम प्रदूषण उत्पन्न करता है। इसमें कालिख, नाइट्रोजन ऑक्साइड और सल्फर ऑक्साइड का उत्सर्जन काफी कम होता है, जिससे यह पर्यावरण के लिए अधिक सुरक्षित बनता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसे मौजूदा LPG प्रणाली में बिना बड़े बदलाव के मिलाकर उपयोग किया जा सकता है। भारतीय मानकों के अनुसार LPG में लगभग 20 प्रतिशत तक DME मिलाने की अनुमति दी जा चुकी है, जो इसे व्यावहारिक विकल्प बनाती है।

DME को कोयला, बायोमास या मेथनॉल से तैयार किया जा सकता है, जिससे यह भारत के लिए एक स्वदेशी और दीर्घकालिक समाधान बन सकता है। इससे न केवल LPG के आयात पर निर्भरता कम होगी, बल्कि देश की ऊर्जा सुरक्षा भी मजबूत होगी। आर्थिक दृष्टि से भी यह लाभकारी है, क्योंकि इससे सरकार के खर्च में कमी आएगी और ऊर्जा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता बढ़ेगी।

इसके अलावा बायोगैस भी एक महत्वपूर्ण विकल्प है, जो ग्रामीण भारत के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। गोबर और जैविक कचरे से बनने वाली यह गैस सस्ती, स्थानीय और पर्यावरण अनुकूल है। इसी प्रकार सौर ऊर्जा से चलने वाले कुकिंग सिस्टम भी धीरे–धीरे लोकप्रिय हो रहे हैं, जो बिना किसी ईंधन लागत के खाना पकाने की सुविधा प्रदान करते हैं। शहरी क्षेत्रों में पाइप्ड नेचुरल गैस (PNG) और इलेक्ट्रिक कुकिंग उपकरण भी LPG के विकल्प के रूप में उभर रहे हैं।

हालांकि इन विकल्पों के सामने कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे नई तकनीकी को अपनाने में समय, प्रारंभिक निवेश और आवश्यक ढांचे का विकास। साथ ही लोगों में जागरूकता बढ़ाना भी जरूरी है, ताकि वे इन विकल्पों को अपनाने के लिए प्रेरित हों।

फिर भी यह स्पष्ट है कि भविष्य की ऊर्जा व्यवस्था अब केवल पारंपरिक ईंधनों पर निर्भर नहीं रहेगी। DME, बायोगैस और सौर ऊर्जा जैसे विकल्प न केवल पर्यावरण के अनुकूल हैं, बल्कि देश को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बदलते समय के साथ इन विकल्पों को अपनाना ही एक सुरक्षित, सस्ता और टिकाऊ भविष्य सुनिश्चित कर सकता है।

बीज बचाओ आंदोलन के जनक: विजय जड़धारी और स्वदेशी बीजों की पुनर्जागरण कहानी

भारत की कृषि परंपरा केवल उत्पादन तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह संस्कृति, प्रकृति और जैव विविधता का जीवंत संगम रही है। इसी परंपरा को बचाने और आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित पहुँचाने का कार्य जिस व्यक्ति ने अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया, वे हैं विजय जड़धारी—जिन्हें "बीज आन्दोलन के जनक" के रूप में जाना जाता है।

साल 1986 में उत्तराखंड के टिहरी गढ़वाल से जुड़े विजय जड़धारी ने "बीज बचाओ आंदोलन" की शुरुआत की। उस समय भारत में हरित क्रांति के बाद हाइब्रिड बीजों का उपयोग तेजी से बढ़ रहा था। इससे उत्पादन तो बढ़ा, लेकिन पारंपरिक बीजों और स्थानीय फसलों का अस्तित्व धीरे–धीरे खतरे में पड़ने लगा। जड़धारी ने इस बदलाव को केवल कृषि का संकट नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और जैविक विविधता के लिए गंभीर खतरा माना।

उन्होंने महसूस किया कि पारंपरिक बीज केवल खाद्य सुरक्षा का आधार नहीं हैं, बल्कि ये स्थानीय जलवायु, मिट्टी और पारिस्थितिकी के अनुरूप विकसित हुए हैं। इन बीजों में रोगों से लड़ने की क्षमता, पोषण मूल्य और कम लागत में खेती करने की विशेषताएं होती हैं। इसके विपरीत, हाइब्रिड बीज किसानों को बाहरी कंपनियों पर निर्भर बना देते हैं और रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों की मांग बढ़ाते हैं।

इसी सोच के साथ विजय जड़धारी और उनके साथियों ने गांव–गांव जाकर लोगों को जागरूक करना शुरू किया। उन्होंने किसानों को पारंपरिक बीजों के महत्व, उनके संरक्षण और उपयोग के फायदे समझाए। धीरे–धीरे यह प्रयास एक बड़े जनआंदोलन का रूप ले गया, जिसे "बीज बचाओ आंदोलन" के नाम से जाना गया। इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य था—स्थानीय बीजों का संरक्षण, जैव विविधता की रक्षा, और किसानों को आत्मनिर्भर बनाना। आंदोलन के तहत किसानों को अपने बीज खुद तैयार करने, उन्हें सुरक्षित रखने और आपस में आदान–प्रदान करने के लिए प्रेरित किया गया। यह एक तरह से "बीज स्वराज" की अवधारणा थी, जिसमें किसान अपने संसाधनों पर खुद नियंत्रण रखते हैं।

उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्रों में इस आंदोलन ने विशेष प्रभाव डाला। यहाँ के किसानों ने फिर से झंगोरा, मडुवा, राजमा, और विभिन्न प्रकार के स्थानीय धान जैसे पारंपरिक फसलों को अपनाना शुरू किया। इससे न केवल मिट्टी की उर्वरता में सुधार हुआ, बल्कि पोषण सुरक्षा भी बढ़ी और खेती की लागत कम हुई।

विजय जड़धारी का यह प्रयास आज केवल उत्तराखंड तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पूरे भारत में टिकाऊ कृषि (Sustainable Agriculture) और जैव विविधता संरक्षण की प्रेरणा बन चुका है। उनका आंदोलन यह सिखाता है कि विकास का अर्थ केवल आधुनिक तकनीकी अपनाना नहीं, बल्कि अपनी जड़ों और परंपराओं को समझकर उन्हें संरक्षित करना भी है।

आज जब जलवायु परिवर्तन, खाद्य संकट और पर्यावरणीय असंतुलन जैसी चुनौतियाँ सामने हैं, तब बीज बचाओ आंदोलन की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। यह आंदोलन हमें याद दिलाता है कि भविष्य की सुरक्षा हमारे अतीत के ज्ञान और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में ही निहित है।

रक्षा प्रौद्योगिकी:
विज्ञान, रणनीति और शक्ति का नया युग (Latest Defence Technology – 2026)

आज का युद्ध केवल सीमाओं पर टैंकों और सैनिकों की भिड़ंत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह प्रयोगशालाओं, डेटा सेंटरों और एल्गोरिद्म के बीच लड़ा जाने लगा है। रक्षा प्रौद्योगिकी अब विज्ञान, इंजीनियरिंग और वास्तविक युद्धक्षेत्र के अनुभव का ऐसा योग बन चुका है, जिसने सुरक्षा की परिभाषा ही बदल दी है।

अनुमान लगाए कि एक सैनिक सीमा पर खड़ा है, लेकिन उसके साथ केवल बंदूक नहीं, बल्कि एक "डिजिटल साथी" भी है—AI आधारित सिस्टम, जो दुश्मन की हर गतिविधि को सेंसर, सैटेलाइट और ड्रोन के जरिए रियल–टाइम में विश्लेषित कर रहा है। यह सिस्टम कुछ सेकंड में लाखों डेटा बिंदुओं को प्रोसेस कर निर्णय लेने में मदद करता है। यही है आधुनिक "डेटा–सेंट्रिक युद्ध", जहाँ जानकारी ही सबसे बड़ा हथियार बन चुकी है।

ड्रोन तकनीकी इसका सबसे व्यवहारिक उदाहरण है। पहले टोही (reconnaissance) के लिए सैनिकों को जोखिम उठाना पड़ता था, लेकिन अब छोटे–छोटे स्वायत्त ड्रोन ऊँचाई से दुश्मन की हर गतिविधि पर नजर रखते हैं। कुछ ड्रोन तो "लॉयटरिंग म्यूनिशन" के रूप में काम करते हैं—वे लक्ष्य के ऊपर मंडराते रहते हैं और सही समय पर स्वयं हमला कर देते हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो यह GPS, कंप्यूटर विज़न और मशीन लर्निंग का संयुक्त उपयोग है।

साइबर युद्ध इस पूरी तस्वीर को और जटिल बनाता है। यदि किसी देश की संचार प्रणाली या सैन्य नेटवर्क को हैक कर दिया जाए, तो बिना एक भी गोली चलाए उसकी रक्षा क्षमता कमजोर हो सकती है। इसलिए आधुनिक सेनाएँ अब केवल हथियार नहीं, बल्कि "एन्क्रिप्टेड नेटवर्क" और "साइबर कमांड" भी विकसित कर रही हैं। यह ठीक उसी तरह है जैसे शरीर में प्रतिरक्षा प्रणाली (immune system) बाहरी आक्रमणों से रक्षा करती है।

उन्नत विनिर्माण, विशेषकर 3D प्रिंटिंग, रक्षा क्षेत्र में एक शांत लेकिन क्रांतिकारी बदलाव ला रही है। युद्ध के दौरान यदि किसी मशीन का छोटा–सा पुर्जा खराब हो जाए, तो पहले उसे दूर से मंगाना पड़ता था। अब उसी स्थान पर डिज़ाइन फाइल के आधार पर वह पुर्जा तुरंत प्रिंट किया जा सकता है। यह तकनीकी सामग्री विज्ञान (materials science) और इंजीनियरिंग के समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण है।

भारत ने मिसाइल और अंतरिक्ष तकनीकी में भी वैज्ञानिक दृष्टि से मजबूत पकड़ बनाई है। सुपरसोनिक गति से चलने वाली मिसाइलें, जो ध्वनि की गति से कई गुना तेज होती हैं, वायुगतिकी (aero dynamics) और उष्मागतिकी (thermo dynamics) के जटिल सिद्धांतों पर आधारित होती हैं। वहीं, सैटेलाइट आधारित निगरानी प्रणाली पृथ्वी की सतह पर हो रही सूक्ष्म गतिविधियों को भी ट्रैक कर सकती है।

"आत्मनिर्भर भारत" और "विजन 2047" जैसे प्रयास इस दिशा में केवल नीतियाँ नहीं, बल्कि एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण का संकेत हैं—जहाँ रक्षा को केवल हथियार निर्माण नहीं, बल्कि एक संपूर्ण तकनीकी पारिस्थितिकी तंत्र के रूप में देखा जा रहा है। स्टार्टअप्स, शोध संस्थान और उद्योग मिलकर ऐसे समाधान

विकसित कर रहे हैं जो भविष्य के युद्धों को परिभाषित करेंगे।

अतः स्पष्ट है कि आने वाले समय में युद्ध का परिणाम केवल सैनिकों की संख्या से नहीं, बल्कि तकनीकी दक्षता, डेटा विश्लेषण और वैज्ञानिक नवाचार से तय होगा। जो देश विज्ञान को समझेगा और उसे व्यवहारिक रूप में लागू करेगा, वही सुरक्षा और शक्ति के इस नए युग में आगे रहेगा।

सार के रुप मे यह जानकारी काफी है कि भारत की नवीनतम रक्षा प्रौद्योगिकी 'आत्मनिर्भर भारत' के तहत AI, ड्रोन, साइबर सुरक्षा और उन्नत विनिर्माण (3D प्रिंटिंग) पर केंद्रित है। प्रमुख पहलों में 2026 तक 30 महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियों के लिए 'अदिति' (ADITI) योजना, iDEX के माध्यम से स्टार्टअप्स को बढ़ावा, तथा रक्षा बलों का विजन 2047 के तहत एकीकृत युद्ध प्रणालियाँ शामिल हैं। DRDO ने हाल ही में 7 नई तकनीकें सेना को सौंपी हैं।

STEM शिक्षा: बदलते समय की आधुनिक पढ़ाई

आज का समय तेजी से बदलती तकनीकी और नवाचार का समय है, जहाँ शिक्षा का स्वरूप भी पूरी तरह बदल चुका है। पहले पढ़ाई केवल किताबों और रटने तक सीमित थी, लेकिन अब सीखना एक अनुभव बन गया है। इसी बदलाव का सबसे बड़ा आधार STEM शिक्षा है, जो विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित को एक साथ जोड़कर समझने का अवसर देती है। यह शिक्षा छात्रों को केवल जानकारी नहीं देती, बल्कि उन्हें सोचने, समझने और नई चीजें बनाने की प्रेरणा देती है।

अब कक्षा केवल चार दीवारों तक सीमित नहीं रही। छात्र डिजिटल उपकरणों, कंप्यूटर, रोबोट और वर्चुअल तकनीकों के माध्यम से सीख रहे हैं। कई जगहों पर बच्चे खुद छोटे–छोटे रोबोट बनाते हैं, मोबाइल ऐप तैयार करते हैं और विज्ञान के प्रयोग करते हैं। इससे उनमें आत्मविश्वास बढ़ता है और वे वास्तविक जीवन की समस्याओं को समझने लगते हैं।

STEM शिक्षा की खास बात यह है कि इसमें सीखने का तरीका बहुत व्यावहारिक होता है। छात्र केवल सिद्धांत नहीं पढ़ते, बल्कि उन्हें लागू भी करते हैं। जैसे पानी की समस्या को समझकर उसका समाधान बनाना, ऊर्जा बचाने के तरीके ढूँढना या खेती में नई तकनीकी का प्रयोग करना। इस तरह पढ़ाई जीवन से जुड़ जाती है और अधिक रोचक बनती है।

आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डिजिटल तकनीकी ने सीखने को और भी आसान बना दिया है। अब हर छात्र अपनी गति से सीख सकता है। जो विषय कठिन लगता है, उसे बार–बार समझने का अवसर मिलता है। इसके साथ ही गेम और प्रोजेक्ट के माध्यम से पढ़ाई मजेदार हो गई है, जिससे बच्चों की रुचि बढ़ती है।

इस शिक्षा का एक और महत्वपूर्ण पहलू है कि यह बच्चों को मिलकर काम करना सिखाती है। समूह में काम करते हुए वे एक–दूसरे से सीखते हैं, अपने विचार साझा करते हैं और बेहतर समाधान खोजते हैं। इससे उनमें सहयोग, नेतृत्व और संवाद जैसे गुण विकसित होते हैं।

आज दुनिया तेजी से बदल रही है और नई–नई नौकरियाँ सामने आ रही हैं। ऐसे में STEM शिक्षा छात्रों को भविष्य के लिए तैयार करती है। यह उन्हें केवल नौकरी के लिए नहीं, बल्कि कुछ नया करने और समाज में बदलाव लाने के लिए प्रेरित करती है।

इस प्रकार STEM शिक्षा आज के समय में केवल पढ़ाई का तरीका नहीं, बल्कि सोचने और जीवन को समझने का एक नया दृष्टिकोण बन चुकी है, जो छात्रों को आत्मनिर्भर, रचनात्मक और सक्षम बनाती है।

प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणाली और आधुनिक विज्ञान–प्रौद्योगिकी का समन्वयः एक संतुलित दृष्टि

मानव सभ्यता के विकास में ज्ञान की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। भारत की प्राचीन ज्ञान परंपरा, जिसे आज Indian Knowledge System (IKS) के रूप में जाना जाता है, सदियों से जीवन के समग्र विकास–शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक–पर आधारित रही है। वहीं आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी तर्क, प्रयोग और नवाचार पर आधारित होकर तेज़ी से बदलती दुनिया की आवश्यकताओं को पूरा कर रही है। आज की सबसे बड़ी आवश्यकता इन दोनों धाराओं के बीच संतुलित समन्वय स्थापित करना है।

प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणाली प्रकृति के साथ सामंजस्य और जीवन मूल्यों पर आधारित थी। वेद, उपनिषद, आयुर्वेद, योग और दर्शन जैसे स्रोतों ने मनुष्य को आत्मानुभूति, नैतिकता और संतुलित जीवन जीने की शिक्षा दी। गुरुकुल व्यवस्था में शिक्षा केवल जानकारी देने का माध्यम नहीं थी, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण और चरित्र विकास का आधार थी। इसके विपरीत, आधुनिक शिक्षा प्रणाली वैज्ञानिक दृष्टिकोण, तकनीकी कौशल और पेशेवर दक्षता पर केंद्रित है, जहाँ डिजिटल माध्यम, अनुसंधान और डेटा विश्लेषण प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

दोनों ज्ञान प्रणालियों के बीच अंतर स्पष्ट होते हुए भी उनकी उपयोगिता समान रूप से महत्वपूर्ण है। प्राचीन ज्ञान 'समग्रता' पर बल देता है, जबकि आधुनिक विज्ञान 'विशेषज्ञता' और 'प्रयोग' को प्राथमिकता देता है। उदाहरण के लिए, आयुर्वेद शरीर और प्रकृति के संतुलन पर आधारित चिकित्सा पद्धति है, जबकि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान रोगों के सूक्ष्म स्तर पर निदान और उपचार में सक्षम है। इसी प्रकार, योग मानसिक शांति और संतुलन प्रदान करता है, जबकि आधुनिक मनोविज्ञान मानसिक समस्याओं के वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करता है।

आज के समय में इन दोनों प्रणालियों का एकीकरण अत्यंत प्रासंगिक हो गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 ने इस दिशा में महत्वपूर्ण पहल की है, जिसमें भारतीय ज्ञान परंपरा को आधुनिक शिक्षा के साथ जोड़ने पर बल दिया गया है। आयुष मंत्रालय के अंतर्गत आयुर्वेद और योग को वैज्ञानिक अनुसंधान के साथ जोड़कर वैश्विक स्तर पर मान्यता दिलाने का प्रयास किया जा रहा है। इसी प्रकार, पर्यावरण संरक्षण में भी प्राचीन भारतीय दृष्टिकोण–"प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व"–आज के वैज्ञानिक उपायों के साथ मिलकर अधिक प्रभावी समाधान प्रदान कर सकता है।

समन्वय का अर्थ केवल दो प्रणालियों को जोड़ना नहीं, बल्कि उनकी श्रेष्ठताओं का संतुलित उपयोग करना है। जब आधुनिक तकनीकी प्राचीन मूल्यों के साथ जुड़ती है, तब एक ऐसी शिक्षा और विकास मॉडल उभरता है जो टिकाऊ (sustainable), मानवीय और समावेशी होता है। यह न केवल आर्थिक प्रगति को बढ़ावा देता है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक संतुलन को भी बनाए रखता है।

प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणाली और आधुनिक विज्ञान–प्रौद्योगिकी एक–दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं। एक हमें हमारी जड़ों से जोड़ता है और जीवन के मूल्यों को सिखाता है, जबकि दूसरा हमें भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए सक्षम बनाता है। इन दोनों का समन्वय ही एक ऐसे समृद्ध, संतुलित और सतत समाज की नींव रख सकता है, जो ज्ञान, विज्ञान और संस्कृति–तीनों में अग्रणी हो।

जैव विविधता और उसका संरक्षणः प्रकृति की अमूल्य धरोहर

जैव विविधता (Biodiversity) शब्द दो भागों से मिलकर बना है–'बायो' अर्थात जीवन और 'डायवर्सिटी' अर्थात विविधता। इस प्रकार जैव विविधता का अर्थ पृथ्वी पर पाए जाने वाले सभी जीवों–पौधों, जानवरों, सूक्ष्मजीवों और उनके पारिस्थितिक तंत्रों की विविधता से है। यह केवल जीवों की संख्या नहीं, बल्कि उनके बीच के संबंधों, पर्यावरण और जीवन–चक्रों की जटिलता को भी दर्शाती है।

वैज्ञानिक दृष्टि से जैव विविधता वह परिवर्तन शीलता है जो विभिन्न जीवों, उनके जीन, प्रजातियों और पारिस्थितिक तंत्रों में पाई जाती है। यह पृथ्वी पर जीवन के संतुलन और निरंतरता का आधार है।

'जैव विविधता के स्तर'

जैव विविधता को मुख्यतः तीन स्तरों पर समझा जाता है–

1. 'आनुवंशिक विविधता (Genetic Diversity)'

यह एक ही प्रजाति के भीतर जीनों में पाए जाने वाले अंतर को दर्शाती है। यही विविधता जीवों को बदलते पर्यावरण के अनुसार ढलने की क्षमता देती है।

2. 'प्रजातीय विविधता (Species Diversity)'

किसी क्षेत्र में विभिन्न प्रजातियों की संख्या और विविधता को दर्शाती है। अधिक प्रजातियाँ = अधिक स्थिर पारिस्थितिकी तंत्र।

3. 'पारिस्थितिक विविधता (Ecosystem Diversity)'

विभिन्न पारिस्थितिक तंत्र जैसे जंगल, रेगिस्तान, समुद्र, नदियाँ आदि में पाए जाने वाले जीवन के स्वरूपों की विविधता।

'जैव विविधता का महत्व'

जैव विविधता मानव जीवन के हर पहलू से जुड़ी हुई है।

- यह हमें 'स्वच्छ वायु, जल और उपजाऊ भूमि' प्रदान करती है।
- कृषि, वानिकी और मत्स्य पालन जैसे क्षेत्रों की नींव है।
- लगभग '70 प्रतिशत आधुनिक औषधियाँ' प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होती हैं।
- यह आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखती है, जिससे जलवायु नियंत्रण संभव होता है।

यदि जैव विविधता घटती है, तो इसका सीधा असर मानव स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था और जीवन गुणवत्ता पर पड़ता है।

'भारत की जैव विविधताः एक वैश्विक धरोहर'

भारत विश्व के मेगाडायवर्स देशों में शामिल है। यहाँ हिमालय से लेकर तटीय क्षेत्रों, रेगिस्तान से लेकर वर्षावनों तक अद्भुत जैव विविधता पाई जाती है।

भारत में दो प्रमुख 'हॉटस्पॉट क्षेत्र' हैं–

- पश्चिमी घाट
- पूर्वी हिमालय

यह क्षेत्र अनेक दुर्लभ और स्थानिक (endemic) प्रजातियों का घर हैं।

'जैव विविधता पर संकट'

आज जैव विविधता कई गंभीर खतरों का सामना कर रही है–

- आवास विनाश (Habitat Loss)' – जंगलों की कटाई, शहरीकरण
- अत्यधिक दोहन (Overexploitation)' – शिकार, संसाधनों का अति उपयोग

- 'प्रदूषण' – जल, वायु और मिट्टी प्रदूषण
- 'विदेशी प्रजातियाँ (Invasive Species)' – जैसे लैंटाना, जलकुंभी
- 'जलवायु परिवर्तन' – तापमान और वर्षा पैटर्न में बदलाव

इन कारणों से कई प्रजातियाँ विलुप्त होने की कगार पर हैं।

'जैव विविधता संरक्षण के उपाय'

जैव विविधता को बचाने के लिए दो प्रमुख रणनीतियाँ अपनाई जाती हैं–

1. इन–सीटू संरक्षण (In & situ Conservation)

- प्राकृतिक आवास में ही प्रजातियों का संरक्षण।
- उदाहरणः राष्ट्रीय उद्यान, वन्यजीव अभयारण्य, बायोस्फीयर रिजर्व

2. एक्स–सीटू संरक्षण (Ex&situ Conservation)

- प्राकृतिक आवास से बाहर संरक्षण।
- उदाहरणः चिड़ियाघर, वनस्पति उद्यान, जीन बैंक

इसके अतिरिक्त–

- वृक्षारोपण
- जैविक खेती
- पर्यावरण शिक्षा
- वन्यजीव संरक्षण कानून
- स्थानीय समुदायों की भागीदारी

भी अत्यंत आवश्यक हैं।

'मानव और प्रकृतिः संतुलन की आवश्यकता'

मानव जीवन और जैव विविधता एक–दूसरे पर निर्भर हैं। यदि प्रकृति का संतुलन बिगड़ता है, तो इसका प्रभाव सीधे मानव अस्तित्व पर पड़ता है। इसलिए यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम प्राकृतिक संसाधनों का 'सतत उपयोग (Sustainable Use)' करें और आने वाली पीढ़ियों के लिए इस धरोहर को सुरक्षित रखें।

जैव विविधता केवल जीवों की विविधता नहीं, बल्कि पृथ्वी पर जीवन की निरंतरता का आधार है। यह हमारी संस्कृति, अर्थव्यवस्था और अस्तित्व से जुड़ी हुई है। यदि हम इसे नहीं बचाएंगे, तो भविष्य संकट में पड़ सकता है।

इसलिए आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है–

प्रकृति के साथ विकास, न कि प्रकृति के खिलाफ।

जैव विविधता की सुरक्षा में अहम भूमिका निभा रहे हैं भारत और उत्तराखंड के राष्ट्रीय उद्यान

भारत उन चुनिंदा देशों में शामिल है जहाँ प्रकृति अपनी सबसे विविध और समृद्ध रूपों में दिखाई देती है। यहाँ घने जंगलों से लेकर ऊँचे हिमालय, विस्तृत घासभूमियाँ और रहस्यमयी मैंग्रोव वन–सभी प्रकार के पारिस्थितिकी तंत्र मौजूद हैं। यही कारण है कि भारत को जैव विविधता की दृष्टि से विश्व के सबसे समृद्ध देशों में गिना जाता है।

इस अनमोल धरोहर को सुरक्षित रखने के लिए देशभर में अनेक राष्ट्रीय उद्यान और वन्यजीव अभयारण्य स्थापित किए गए हैं, जो न केवल दुर्लभ जीवों को संरक्षण देते हैं बल्कि प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उत्तराखंड में स्थित 'Jim Corbett National Park' भारत का पहला राष्ट्रीय उद्यान है, जो विशेष रूप से बाघ संरक्षण के लिए प्रसिद्ध है। वहीं असम का 'Kaziranga National Park' एक सींग वाले गैंडे का सुरक्षित घर है। गुजरात का 'Gir National Park' एशियाई शेरों का एकमात्र प्राकृतिक आवास है, जबकि पश्चिम बंगाल का 'Sundarbans National Park' अपने अनोखे मैंग्रोव वन और रॉयल बंगाल टाइगर के लिए विश्व प्रसिद्ध है।

उत्तराखंड की बात करें तो यह राज्य हिमालय की गोद में बसा जैव विविधता का अद्भुत केंद्र है। यहाँ ऊँचाई के साथ–साथ प्रकृति के रंग भी बदलते हैं–कहीं बर्फीली चोटियाँ, कहीं हरे–भरे वन और कहीं रंग–बिरंगे फूलों की घाटियाँ।

यहाँ स्थित 'Nanda Devi National Park' और 'Valley of Flowers National Park' यूनेस्को विश्व धरोहर स्थल हैं, जो अपनी अनोखी वनस्पतियों और दुर्लभ जीवों के लिए जाने जाते हैं। 'Rajaji National Park' हाथियों और बाघों का महत्वपूर्ण निवास स्थान है, जबकि 'Gangotri National Park' हिमालयी ग्लेशियरों और उच्च पर्वतीय पारिस्थितिकी का संरक्षण करता है।

उत्तराखंड के वन्यजीव अभयारण्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। 'Binsar Wildlife Sanctuary' अपने समृद्ध पक्षी जीवन के लिए प्रसिद्ध है। 'Kedarnath Wildlife Sanctuary' कस्तूरी मृग का सुरक्षित आवास है, जबकि 'Askot Wildlife Sanctuary' और 'Sonanadi Wildlife Sanctuary' हिमालयी वन्यजीवों और जैव विविधता के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

इन सभी संरक्षित क्षेत्रों का महत्व केवल वन्यजीवों तक सीमित नहीं है। ये क्षेत्र पर्यावरण संतुलन बनाए रखने, जलवायु को नियंत्रित करने, पर्यटन को बढ़ावा देने और वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए भी अत्यंत आवश्यक हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इन प्राकृतिक धरोहरों के महत्व को समझें और इनके संरक्षण में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करें, क्योंकि प्रकृति सुरक्षित रहेगी तो हमारा भविष्य भी सुरक्षित रहेगा।

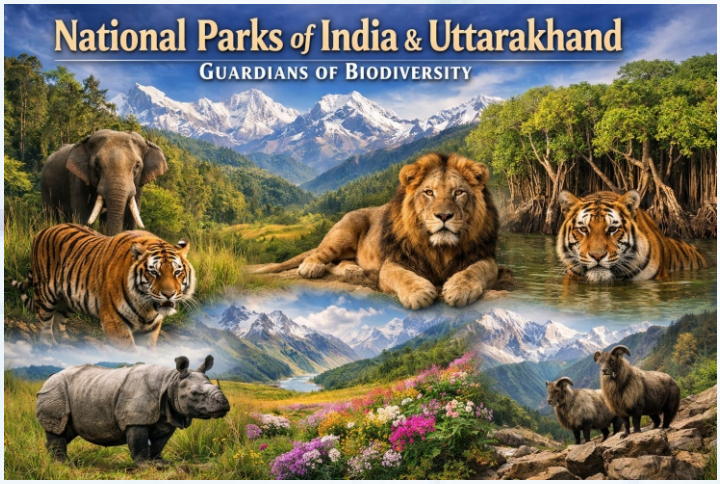

GMO और जैव प्रौद्योगिकी: विकास, पर्यावरण और नैतिक संतुलन की चुनौती

GMO (Genetically Modified Organism) और Biotechnology आधुनिक विज्ञान की ऐसी उन्नत तकनीकें हैं, जिन्होंने जीवन के मूल आधार–DNA–को समझने और उसमें बदलाव करने की क्षमता प्रदान की है। जैव प्रौद्योगिकी का अर्थ है जीवित कोशिकाओं, सूक्ष्मजीवों या जैविक प्रक्रियाओं का उपयोग करके मानव के लिए उपयोगी उत्पाद तैयार करना। परंपरागत रूप से दही, पनीर और किण्वन जैसी प्रक्रियाएँ भी इसी का हिस्सा रही हैं, लेकिन आज यह विज्ञान जीन स्तर तक पहुँच चुका है, जहाँ जीवन की संरचना को बदला जा सकता है।

GMO ऐसे जीव होते हैं जिनके जीन को वैज्ञानिकों द्वारा संशोधित किया जाता है। इसमें एक जीव का जीन दूसरे जीव में डालकर नई विशेषताएँ विकसित की जाती हैं। उदाहरण के रूप में ठज कपास को कीटों से बचाने के लिए विकसित किया गया है और "Golden Rice" में विटामिन । की मात्रा बढ़ाई गई है, जिससे कुपोषण को कम करने में मदद मिलती है। यह तकनीकी कृषि उत्पादन बढ़ाने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

इसी क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है ट्रांसजेनिक जीव, विशेषकर ट्रांसजेनिक जानवर। ट्रांसजेनिक जानवर वे होते हैं जिनके हमदवउम में किसी अन्य प्रजाति का जीन डाला जाता है। प्रयोगशालाओं में बनाए गए कुछ चूहे ऐसे होते हैं जिनमें green fluorescent protein डाला गया होता है, जिससे वे विशेष रोशनी में हरे रंग में चमकते हैं। यह केवल एक प्रयोग नहीं, बल्कि जीन की कार्यप्रणाली और रोगों के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक उपकरण है।

ट्रांसजेनिक तकनीकी का विकास एक लंबे वैज्ञानिक इतिहास का परिणाम है। भ्रुण स्थानांतरण, DNA माइक्रोइंजेक्शन और जीन संपादन जैसी तकनीकों के विकास ने इसे संभव बनाया। आज ब्त्पैच्त् जैसी आधुनिक तकनीकी ने जीन संशोधन को तेज, सटीक और अधिक सुलभ बना दिया है, जिससे शोध और अनुप्रयोग दोनों में तेजी आई है।

इन तकनीकों का उपयोग चिकित्सा, कृषि और अनुसंधान में अत्यंत महत्वपूर्ण है। ट्रांसजेनिक चूहों का उपयोग कैंसर, मधुमेह, अल्जाइमर और हृदय रोग जैसी बीमारियों के अध्ययन में किया जाता है। इसके अलावा, ट्रांसजेनिक जानवरों के माध्यम से मानव के लिए उपयोगी प्रोटीन और दवाइयाँ भी बनाई जा रही हैं, जो पहले बहुत महंगे तरीकों से तैयार होती थीं।

लेकिन इन सभी उपलब्धियों के बीच सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है–'प्रकृति और पर्यावरण पर इसका प्रभाव'।

GMO और ट्रांसजेनिक तकनीकी के कुछ स्पष्ट लाभ हैं। इनसे रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग कम होता है, जिससे मिट्टी और जल प्रदूषण में कमी आती है। कृषि उत्पादन बढ़ता है, जिससे खाद्य सुरक्षा मजबूत होती है। साथ ही, पशुओं के स्वास्थ्य में सुधार और रोग प्रतिरोध क्षमता भी बढ़ाई जा सकती है।

इसके बावजूद कई गंभीर चिंताएँ भी सामने आती हैं। यदि ट्रांसजेनिक जीव प्राकृतिक वातावरण में फैल जाते हैं या उनके जीन परागण के माध्यम से जंगली पौधों में स्थानांतरित हो जाते हैं, तो यह प्राकृतिक प्रजातियों को प्रभावित कर सकता है। ऐसी स्थिति में कुछ नई प्रजातियाँ अत्यधिक प्रभावशाली होकर अन्य

प्रजातियों को प्रतिस्थापित कर सकती हैं, जिससे पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ने का खतरा उत्पन्न होता है। यह जैव विविधता के लिए दीर्घकालिक जोखिम बन सकता है।

इसके साथ ही नैतिक मुद्दे भी जुड़े हुए हैं। कई वैज्ञानिक और सामाजिक समूह यह सवाल उठाते हैं कि क्या मानव को प्रकृति के मूल ढांचे में इतना हस्तक्षेप करना चाहिए। अनुसंधान में प्रयोग किए जाने वाले जानवरों के साथ होने वाले व्यवहार को लेकर भी चिंता व्यक्त की जाती है, क्योंकि इससे पशु कल्याण (animal welfare) का प्रश्न सामने आता है।

वर्तमान में CRISPR जैसी उन्नत तकनीकों के माध्यम से जीन संशोधन को अधिक सटीक बनाया जा रहा है, जिससे अनावश्यक परिवर्तन और जोखिम को कम करने का प्रयास किया जा रहा है। फिर भी, यह आवश्यक है कि इन तकनीकों के दीर्घकालिक पर्यावरणीय प्रभावों की लगातार निगरानी की जाए और सख्त वैज्ञानिक एवं नैतिक मानकों का पालन किया जाए।

इस प्रकार GMO और Biotechnology केवल वैज्ञानिक प्रगति का प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वे एक जिम्मेदारी भी हैं। इनका सही उपयोग मानव जीवन को बेहतर बना सकता है, लेकिन यदि सावधानी नहीं बरती गई, तो यह प्रकृति के संतुलन को प्रभावित कर सकता है। इसलिए विज्ञान और पर्यावरण के बीच संतुलन बनाए रखना ही भविष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

टेक्नोलॉजी की मदद से जंगलों को आग से कैसे बचाएं: आसान और प्रभावी उपाय

जंगलों में आग लगना आज एक गंभीर समस्या है, लेकिन इसे केवल बड़ी तकनीकों से ही नहीं, बल्कि छोटे–छोटे व्यावहारिक कदमों और सही तकनीकी उपयोग से काफी हद तक रोका जा सकता है। अगर हम सही योजना बनाएं, तो आग लगने से पहले ही उसे रोकना संभव है।

सबसे पहले जरूरत है 'जल्दी पहचान (Early Detection)' की। इसके लिए जंगलों में छोटे–छोटे 'स्मार्ट सेंसर' लगाए जा सकते हैं, जो तापमान और धुएँ को मापते हैं। जैसे ही कोई असामान्य स्थिति होती है, यह तुरंत वन विभाग या कंट्रोल रूम को सूचना भेज देते हैं। कई जगहों पर 'वॉच टावर और कैमरे' भी लगाए जाते हैं, जो लगातार निगरानी करते हैं। यह व्यवस्था महंगी नहीं होती और स्थानीय स्तर पर भी लागू की जा सकती है।

दूसरा महत्वपूर्ण कदम है 'ड्रोन निगरानी'। ड्रोन का उपयोग वन विभाग या स्थानीय टीम आसानी से कर सकती है। सप्ताह में एक–दो बार ड्रोन से निगरानी करने पर सूखी घास, जलने योग्य सामग्री और संभावित जोखिम वाले क्षेत्रों की पहचान की जा सकती है। अगर कहीं धुआँ उठता दिखे, तो तुरंत कार्रवाई की जा सकती है।

तीसरा, 'सैटेलाइट और मोबाइल अलर्ट सिस्टम'। आज कई सरकारी और वैश्विक प्लेटफॉर्म रियल–टाइम फायर अलर्ट देते हैं। वन विभाग और स्थानीय प्रशासन इनका उपयोग करके तुरंत टीम भेज सकते हैं। इसके साथ मोबाइल ऐप के जरिए ग्रामीणों को भी अलर्ट भेजे जा सकते हैं।

चौथा, 'स्थानीय स्तर पर फायर लाइन (Fire Line) बनाना'। यह एक बहुत ही व्यावहारिक और प्रभावी तरीका है। इसमें जंगल के बीच–बीच में घास और सूखी पत्तियों को साफ कर दिया जाता है, ताकि आग एक हिस्से से दूसरे हिस्से में न फैल सके। यह काम स्थानीय समुदाय और वन विभाग मिलकर कर सकते हैं।

पाँचवां, 'सामुदायिक भागीदारी और प्रशिक्षण'। तकनीकी तभी सफल होती है जब लोग जागरूक हों। गाँवों में रहने वाले लोगों को यह सिखाया जा सकता है कि आग लगने पर क्या करना है, किसे सूचना देनी है और कैसे शुरुआती स्तर पर आग को रोका जा सकता है। छोटे–छोटे उपकरण जैसे पानी के टैंक, पाइप और फायर बीटर (Fire Beater) भी उपलब्ध कराए जा सकते हैं।

छठा, 'तेजी से प्रतिक्रिया (Rapid Response)' जैसे ही आग की सूचना मिले, तुरंत छोटी टीम भेजी जानी चाहिए। इसके लिए बाइक या छोटे वाहन उपयोगी होते हैं, जो जल्दी जंगल के अंदर पहुँच सकते हैं। बड़े हेलीकॉप्टर बाद में आते हैं, लेकिन शुरुआती नियंत्रण सबसे ज्यादा जरूरी होता है।

सातवां, 'डेटा और AI का उपयोग'। पिछले वर्षों के डेटा के आधार पर यह पहचाना जा सकता है कि कौन से क्षेत्र ज्यादा संवेदनशील हैं। वहाँ पहले से ज्यादा निगरानी और तैयारी रखी जा सकती है। इससे संसाधनों का सही उपयोग होता है।

अंत में, सबसे जरूरी बात–'लापरवाही से बचना'। जंगलों में सिगरेट, जलती लकड़ी या कचरा फेंकना आग का सबसे बड़ा कारण है। अगर लोग सावधान रहें, तो 70–80 प्रतिशत आग की घटनाएँ रोकी जा सकती हैं।

सरल शब्दों में, जंगलों को आग से बचाने के लिए तीन चीजें जरूरी हैं–

- समय पर जानकारी
- तेज प्रतिक्रिया
- लोगों की भागीदारी

तकनीकी हमें साधन देती है, लेकिन सफलता तब मिलती है जब हम उसे सही तरीके से अपनाते हैं। जंगल हमारे जीवन का आधार हैं, इसलिए उन्हें बचाना हमारी जिम्मेदारी भी है और कर्तव्य भी।

स्कूल इनोवेशन काउंसिलः नवाचार से उद्यमिता तक छात्रों की नई उड़ान

आज के बदलते शैक्षिक परिवेश में शिक्षा केवल किताबों तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि यह नवाचार (Innovation) और उद्यमिता (Entrepreneurship) की दिशा में आगे बढ़ रही है। इसी सोच को साकार करने के लिए शिक्षा मंत्रालय के Ministry of Education's Innovation Cell (MIC) द्वारा School Innovation Council (SIC)' कार्यक्रम शुरू किया गया है, जो देशभर के स्कूलों में रचनात्मकता, नए विचारों और उद्यमशीलता की संस्कृति विकसित करने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

School Innovation Council का मुख्य उद्देश्य छात्रों में Innovation, Ideation, Creativity, Design Thinking and Entrepreneurship की भावना विकसित करना है। यह कार्यक्रम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) के दृष्टिकोण के अनुरूप "Out of the Box Thinking" को बढ़ावा देता है, ताकि छात्र केवल पाठ्यपुस्तकों तक सीमित न रहकर वास्तविक जीवन की समस्याओं के समाधान खोज सकें।

इस पहल के अंतर्गत स्कूलों को एक वार्षिक गतिविधि कैलेंडर के अनुसार विभिन्न कार्यक्रम आयोजित करने होते हैं। इनमें आइडिया जनरेशन, नवाचार प्रतियोगिताएं, प्रोटोटाइप (Model) निर्माण, स्टार्टअप आइडिया प्रस्तुति और कार्यशालाएं शामिल होती हैं। ये गतिविधियाँ छात्रों को अपने विचारों को विकसित करने, उन्हें मॉडल में बदलने और आगे प्रतियोगिताओं में प्रस्तुत करने के लिए तैयार करती हैं।

SIC की एक विशेषता यह भी है कि यह स्कूलों को उच्च शिक्षा संस्थानों के Innovation Councils से जोड़ता है। इससे छात्रों को बड़े स्तर पर एक्सपोजर मिलता है, वे विशेषज्ञों से सीखते हैं और अपने विचारों को आगे बढ़ाने का अवसर प्राप्त करते हैं। इस प्रकार स्कूल स्तर से ही नवाचार की एक मजबूत नींव तैयार होती है।

इस कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए स्कूल के प्रधानाचार्य को School Innovation Council का पंजीकरण करना होता है और MIC द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों का पालन करना होता है। इसके माध्यम से स्कूल में एक संगठित ढांचा तैयार होता है, जो नवाचार और उद्यमिता गतिविधियों को निरंतर आगे बढ़ाता है।

School Innovation Council केवल एक कार्यक्रम नहीं, बल्कि एक सोच है—जो छात्रों को समस्याओं को पहचानने, उनके समाधान खोजने और उन्हें अवसर में बदलने की क्षमता प्रदान करती है। यह छात्रों को "नौकरी पाने वाला" नहीं, बल्कि "नौकरी देने वाला" बनने की दिशा में प्रेरित करता है।

इस प्रकार, यदि स्कूल स्तर पर ही नवाचार और उद्यमिता को सही दिशा दी जाए, तो आने वाले समय में देश को ऐसे युवा मिलेंगे जो आत्मनिर्भर, रचनात्मक और समाधान–केन्द्रित होंगे। यही पहल भविष्य के भारत को नवाचार और स्टार्टअप की शक्ति से सशक्त बनाने की दिशा में एक मजबूत कदम है।

उद्यमिता (Entrepreneurship): एक सोच, एक बदलाव

दुनिया में दो तरह के लोग होते हैं–एक जो समस्या देखते हैं और दूसरे जो उस समस्या का समाधान ढूंढकर उसे एक अवसर में बदल देते हैं। यही समाधान खोजने की कला उद्यमिता है।

सरल शब्दों में, जब आप अपने किसी नए विचार (Idea) को अपनी मेहनत और जोखिम उठाने की क्षमता से एक सफल व्यवसाय का रूप देते हैं, तो आप एक उद्यमी कहलाते हैं।

इसे एक उदाहरण से समझें–

यदि कोई छात्र पर्यावरण बचाने के लिए प्लास्टिक के विकल्प के रूप में 'पेपर बैग' बनाकर बेचना शुरू करता है, तो यह उद्यमिता है। यहाँ उसने समस्या (प्लास्टिक प्रदूषण) को पहचाना और उसका समाधान (पेपर बैग) पेश किया।

उद्यमिता के 4 स्तंभ:

- नवाचार (Innovation): भीड़ से अलग और कुछ नया सोचना।
- समाधान (Problem Solving): लोगों की मुश्किलों को आसान बनाना।
- जोखिम (Risk): चुनौतियों से न डरना और आगे बढ़ना।
- आत्मनिर्भरता: नौकरी मांगने के बजाय नौकरी देने वाला बनना।

एक सूत्र में:

"Idea + Action + Risk (Entrepreneurship)"

उद्यमिता न केवल व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाती है, बल्कि नए रोजगार पैदा कर देश की अर्थव्यवस्था को भी मजबूती देती है। यह सिर्फ पैसा कमाने का जरिया नहीं, बल्कि समाज में सकारात्मक बदलाव लाने का एक सशक्त माध्यम है।

पश्चिमी हिमालय की जैवविविधता: प्रकृति की अनमोल धरोहर

पश्चिमी हिमालय भारत के सबसे समृद्ध और अद्भुत जैवविविधता क्षेत्रों में से एक है। यह क्षेत्र पूर्वी हिमाचल प्रदेश से लेकर सम्पूर्ण उत्तराखंड तक फैला हुआ है और तराई क्षेत्रों से लेकर हिमाच्छादित ऊँची चोटियों तक विस्तृत है। इसकी भौगोलिक विविधता–ऊँचाई, जलवायु और मिट्टी में परिवर्तन–इसे जैवविविधता का एक अनूठा केंद्र बनाती है।

यहाँ हजारों प्रकार के पौधे पाए जाते हैं, जिनमें फूलदार पौधों (एंजियोस्पर्म) की प्रमुखता है, साथ ही जिम्नोस्पर्म, टेरिडोफाइट्स, ब्रायोफाइट्स और लाइकेन भी बड़ी संख्या में मौजूद हैं। जीव–जंतुओं की दृष्टि से भी यह क्षेत्र अत्यंत समृद्ध है, जहाँ स्तनधारी, पक्षी, कीट, सरीसृप और मछलियों की विविध प्रजातियाँ पाई जाती हैं। यही क्षेत्र गंगा, यमुना और शारदा जैसी महत्वपूर्ण नदियों का उद्गम स्थल है, जो करोड़ों लोगों के जीवन का आधार हैं।

पश्चिमी हिमालय की पारिस्थितिकी अत्यंत जटिल और संतुलित है। यहाँ उपोष्णकटिबंधीय वनों से लेकर अल्पाइन घासभूमियों तक विभिन्न पारिस्थितिक तंत्र मौजूद हैं। लगभग 65 प्रतिशत क्षेत्र वनाच्छादित है और एक बड़ा हिस्सा संरक्षित क्षेत्रों के अंतर्गत आता है, जो इस क्षेत्र की पारिस्थितिक सुरक्षा को मजबूत बनाता है। यह क्षेत्र कई दुर्लभ और स्थानिक प्रजातियों का घर है। औषधीय पौधे जैसे Aconitum] Nardostachys and Podophyllum यहाँ विशेष महत्व रखते हैं, जबकि हिम तेंदुआ, कस्तूरी मृग जैसे जीव इसकी जैवविविधता को और समृद्ध बनाते हैं। नंदा देवी बायोस्फीयर रिजर्व और वैली ऑफ फ्लावर्स जैसे विश्व धरोहर स्थल इसकी वैश्विक पहचान को और मजबूत करते हैं।

पश्चिमी हिमालय में जैवविविधता केवल प्राकृतिक संपदा नहीं, बल्कि स्थानीय संस्कृति और जीवनशैली का अभिन्न हिस्सा है। यहाँ के पवित्र वन, पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ और स्थानीय ज्ञान प्रणाली जैवविविधता संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्थानीय समुदाय भोजन, औषधि, ईंधन और आजीविका के लिए प्रकृति पर निर्भर रहते हैं और इसके संरक्षण में सक्रिय भागीदारी निभाते हैं।

यह क्षेत्र मानव जीवन के लिए अनेक आवश्यक संसाधन प्रदान करता है, जैसे जल, भोजन, औषधियाँ और ऊर्जा के स्रोत। साथ ही यह जलवायु संतुलन बनाए रखने, कार्बन अवशोषण करने और मृदा संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

हालाँकि, वर्तमान समय में पश्चिमी हिमालय की जैवविविधता कई चुनौतियों का सामना कर रही है। जलवायु परिवर्तन, वनाग्नि, अवैध शिकार, आक्रामक प्रजातियाँ और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन इसके लिए गंभीर खतरे हैं। विशेष रूप से कीड़ा–जड़ी (Cordyceps sinensis) का अत्यधिक दोहन इस क्षेत्र की पारिस्थितिकी और सामाजिक व्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए संरक्षण के विभिन्न प्रयास किए जा रहे हैं, जैसे सामुदायिक वन प्रबंधन, संरक्षित क्षेत्रों का विस्तार, पारंपरिक ज्ञान का संरक्षण और सतत उपयोग की रणनीतियाँ। स्थानीय समुदायों की भागीदारी इन प्रयासों की सफलता की कुंजी है।

पश्चिमी हिमालय केवल एक प्राकृतिक क्षेत्र नहीं, बल्कि जीवन, संस्कृति और पर्यावरण का संगम है। इसकी जैवविविधता की रक्षा करना न केवल पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यक है, बल्कि मानवता के भविष्य के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

पश्चिमी हिमालय केवल एक प्राकृतिक क्षेत्र नहीं, बल्कि जीवन, संस्कृति और पर्यावरण का संगम है। इसकी जैवविविधता की रक्षा करना न केवल पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यक है, बल्कि मानवता के भविष्य के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इको क्लब फॉर मिशन लाइफः स्कूलों से शुरू हो रही हरित जीवनशैली की नई पहल

'इको क्लब फॉर मिशन लाइफ' (म्बव ब्सनइ वित डपेपवद स्पथ्र) भारत सरकार की एक महत्वपूर्ण पहल है, जिसका उद्देश्य स्कूलों के माध्यम से बच्चों और युवाओं में पर्यावरण संरक्षण, सतत विकास और जिम्मेदार जीवनशैली के संस्कार विकसित करना है। यह पहल राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की उस सोच को मजबूत करती है, जिसमें शिक्षा को केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित न रखकर जीवन से जोड़ने पर बल दिया गया है। इसके माध्यम से विद्यार्थियों को प्रकृति के प्रति संवेदनशील, जागरूक और सक्रिय नागरिक बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

इस कार्यक्रम के अंतर्गत छात्रों को केवल पर्यावरण के बारे में पढ़ाया नहीं जाता, बल्कि उन्हें व्यवहारिक गतिविधियों से भी जोड़ा जाता है। जैसे–कचरा प्रबंधन, जल संरक्षण, ऊर्जा की बचत, ई–वेस्ट में कमी, सिंगल–यूज़ प्लास्टिक का विकल्प, स्वच्छता, हरित परिसर और स्वस्थ जीवनशैली जैसे विषयों पर कार्य कराया जाता है। इससे बच्चों में यह समझ विकसित होती है कि पर्यावरण की रक्षा केवल सरकार या संस्थाओं की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि हर व्यक्ति की दैनिक आदतों से जुड़ा विषय है।

मिशन LiFE का मूल संदेश है–'Lifestyle for Environment', अर्थात ऐसी जीवनशैली अपनाना जो प्रकृति के अनुकूल हो। इको क्लब इसी सोच को विद्यालय स्तर पर एक जनआंदोलन का रूप देने की दिशा में काम कर रहे हैं। छात्र पौधारोपण, जल बचाओ अभियान, पुनर्चक्रण, ऊर्जा संरक्षण और स्वच्छता गतिविधियों के माध्यम से न केवल स्वयं सीखते हैं, बल्कि परिवार और समाज को भी प्रेरित करते हैं।

यह पहल इसलिए भी विशेष है क्योंकि यह बच्चों को भविष्य का जिम्मेदार नागरिक बनाने के साथ–साथ वर्तमान में ही परिवर्तन का वाहक बनाती है। आज जब जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और संसाधनों के अंधाधुंध उपयोग जैसी चुनौतियाँ तेजी से बढ़ रही हैं, तब 'इको क्लब फॉर मिशन लाइफ' जैसे कार्यक्रम नई पीढ़ी को समाधान का हिस्सा बनाने की दिशा में एक सार्थक और दूरदर्शी कदम हैं।